ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 08 जुलाई 2018

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार, 08 जुलाई 2018 से 14 जुलाई 2018

आषाढ़ कृ. – 10 ● वि० सं०–2075 ● वर्ष 60, अंक 27, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 195 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,119 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा महाराष्ट्र ने विश्व की प्रथम आर्य समाज में आयोजित की भजन सन्ध्या

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा महाराष्ट्र ने सभा प्रधान आर्य रत्न डॉ. पूनम सूरी जी के संकल्पों को सार्थक करते हुए मुम्बई और पूना स्थित डी.ए.वी.विद्यालयों के सौजन्य से इन विद्यालयों में कार्यरत् संगीत अध्यापकों के माध्यम से एक भजन सन्ध्या का आयोजन किया। आर्य समाज काकड़वाड़ी में 24 जून 2018 को सायं 7 बजे इस विश्व वंद्य आर्य समाज में उपसभा महाराष्ट्र के पदाधिकारियों, डी ए वी के क्षेत्रीय निदेशकों, विद्यालयों के प्राचार्यो तथा संगीत अध्यापकों सहित आर्य समाज काकड़वाड़ी के ट्रस्टियों, पदाधिकारियों से खचाखच भरे हॉल में यज्ञ हुआ जिसमें श्री एस.के.शर्मा, मन्त्री, आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा सपत्नीक मुख्य यजमान के रूप में उपस्थित हुए।

यज्ञ के उपरान्त औपचारिकताओं को निभाकर आर्य समाज के पदाधिकारियों ने डी.ए.वी. से आए हुए महानुभावों का स्वागत किया। इसके पश्चात् मुम्बई और पूना के विभिन्न विद्यालयों से आए संगीत शिक्षकों ने आर्य समाज और वैदिक विचार धारा पर आधारित भजनों से पूरे सभागार को संगीतमय बना दिया। प्रत्येक विद्यालय से न्यूनतम 8 से 10 संगीताचार्यो ने इन भजनों में अपना स्वर दिया और अलग अलग वाद्यों पर अपनी कला का मनोहारी प्रदर्शन किया।

सभा को सम्बोधित करते हुए आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के मन्त्री श्री एस के शर्मा ने भजन सन्ध्याओं की इस परम्परा के रूप में आर्यरत्न डॉ. पूनम सूरी के आध्यात्मिक सरोकारों को कार्यरूप दिए जाने की बात करते हुए बताया कि जब से आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा एवं डी.ए.वी. का नेतृत्व महात्मा आनन्द स्वामी के सुपौत्र आर्यरत्न डॉ. पूनम सूरी के हाथों में सौंपा गया है, तब से डी.ए.वी. की समस्त संस्थाओं (जो आज की तिथि में 920 के लगभग हैं) के प्राचार्यों, अध्यापकों के माध्यम से 44 लाख छात्र छात्राओं सहित उनके अभिभावकों तक ऋषि सन्देश पहुँचाकर इन संस्थाओं को आर्य समाज की मान्यताओं और विचारधारा के अनुरूप ढालने का प्रयास किया जा रहा है।

इस अवसर पर श्री रवि मल्होत्रा तथा उनकी धर्मपरायणतणा पत्नी श्रीमती विमल मल्होत्रा ने उपस्थित होकर सूरी परिवार की उपस्थिति दर्ज की। आर्य समाज काकड़वाड़ी के प्रबन्धक ट्रस्टी श्री अश्विन भाई बल्लभ पटेल, प्रधान श्री देश बन्धु शर्मा, मन्त्री श्री विनय गौतम एवं अन्य ट्रस्टी महानुभावों ने इस संगीतमय प्रयास के लिए मान्य सूरी जी के नेतृत्व को अपनी श्रद्धांजलि देते हुए इस कार्यक्रम को आगे बढ़ाने में अपनी शुभकामनाएँ अभिव्यक्त कीं।

इस आयोजन में डी.ए.वी. नेरूल, डी.ए.वी. एयरोली, डी.ए.वी. थाणे, डी.ए.वी. मुलुंड, डी.ए.वी. खारगर, डी.ए.वी. पनवेल, डी.ए. वी. पूना के संगीत अध्यापकों/अध्यापिकाओं ने भजन प्रस्तुत किए।

इस सुन्दर आयोजन का श्रेय श्री महेश चोपड़ा एवं श्री जोस कुरियन, प्रधान उपसभा महाराष्ट्र–I तथा II और उनके सहायक प्रधानाचार्यों को जाता है।

डी.ए.वी. फतेहाबाद (हरि.) में सात दिनों तक चला चरित्र निर्माण शिविर

सेठ बद्री प्रसाद डी.ए.वी. स्कूल फतेहाबाद में कक्षा छठी से आठवीं के सभी विद्यार्थियों के लिए साप्ताहिक चरित्र निर्माण शिविर का आयोजन किया गया। इस शिविर में मुख्य प्रवक्ता श्री प्रमोद योगार्थी आचार्य, दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार से विशेष रूप से आमंत्रित थे। डॉ. प्रमोद ने बच्चों को हवन विधि, योग व प्राणायाम तथा नैतिक मूल्यों के बारे में बड़े ही रोचक ढंग से समझाया।

श्री सतीश शास्त्री ने योग और वेदों का महत्त्व बताया और डॉ. अश्वनी शर्मा ने संगीत के माध्यम से अच्छे संस्कारों का पाठ पढ़ाया।

प्राचार्या श्रीमती सुनीता मदान ने बताया कि एक मेधावी छात्र बनने के साथ–साथ ये ज़रूरी है कि उसे एक अच्छा इंसान भी बनाया जाये जो समाज व देश की प्रगति में अपना योगदान दे सके। एक संस्कारित बच्चा ही समाज कल्याण के कार्यों को गति दे सकता है। इस तरह के शिविर हर वर्ष सभी डी.ए.वी. संस्थाओं में लगाये जाते हैं। शिविर में भजन गायन आर्य समाज के नियम प्रतियोगिता, गीता श्लोक गायन

प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। श्रीमती मदान ने विजयी बच्चों को पुरस्कृत किया व आचार्य जी का धन्यवाद किया।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – **पूनम सूरी**

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 08 जुलाई 2018 से 14 जुलाई 2018

हे सोम! हृदय–कलश में प्रवेश करो

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

पवस्य सोम देववीतये वृषा, इन्द्रस्य हार्दि सोमधानमाविश।
पुरा नो बाधाद् दुरिताति पारय, क्षेत्रविद्धि दिश आहा विपृच्छते।।

ऋग् ९.७०.९

ऋषिः **रेणुः वैश्वामित्रः**। देवता **पवमानः सोमः**। छन्दः **जगती**।

● **(सोम)** हे सोम परमात्मन्! **(तू)**, **(वृषा)** वर्षक **(होता हुआ)**, **(देववीतये)** दिव्य गुणों की प्राप्ति के लिए, **(पवस्व)** प्रवाहित हो, **(इन्द्रस्य)** आत्मा के, **(हार्दि)** हृदय–रूप, **(सोमधानं)** सोम–कलश में, **(आविश)** प्रविष्ट हो।, **(बाधात्)** बाधे जाने से, **(पुरा)** पहले, **(नः)** हमें, **(दुरिता अति)** पापचरणों से लंघाकर, **(पारय)** पार करदे। **(क्षेत्रवित्)** मार्ग का ज्ञाता, **(विपृच्छते)** विशेषरूप से पूछनेवाले के लिए, **(दिशः)** दिशाओं को, **(आह हि)** बताता ही है।

● हे रसागर सोम परमात्मन्! तुम 'वृषा' हो, रस की वर्षा करनेवाले हो। तुम दिव्य गुणों के रस के साथ मेरे अन्दर प्रवाहित होवो। तुम आत्मा के हृदय–रूप सोम–कलश में आकर प्रविष्ट होवो। मेरा आत्मा न जाने कब से सोम–पान के लिए उत्कंठित हो रहा है, उस प्यासे की तृषा को दूर करो। तुम कामवर्षी हो, मेरी कामना को पूर्ण करो। तुम आनन्दवर्षी हो, मुझपर आनन्द की वर्षा करो।

कभी–कभी मेरा आत्मा 'दुरितों' से घिर जाता है। पाप–भावनाएँ उसे आगे बढ़ने से रोकती हैं। पाप–कर्म उसे निगलने के लिए तैयार रहते हैं। आसपास का पापमय वातावरण उसे पाप–मार्ग पर चलने के लिए प्रलोभित करता है। ऐसे समय में हे मेरे सोम प्रभु! क्या तुम खड़े देखते ही रहोगे? क्या तुम मुझे 'दुरितों' से ग्रसा जाने दोगे? क्या तुम मुझे पाप–ताप के प्रहारों से छलनी हो जाने दोगे? क्या तुम मुझे दुराचार–रूप शत्रुओं से आक्रान्त हो जाने दोगे? नहीं, तुम मेरे उद्धारक होकर आओ। इससे पहले कि 'दुरित' मेरे आत्मा पर प्रभुत्व पायें, उसे पतनोन्मुख करें, तुम त्वरित गति से मेरे पास आ जाओ और मुझे उन दुरितों से लंघाकर पार कर दो। संसार का यह नियम है कि जो 'क्षेत्रवित्' है, मार्ग का ज्ञाता है, वह पूछनेवाले को दिशा बताता ही है। तुमसे बढ़कर 'क्षेत्रवित्' बढ़कर मार्गज्ञ अन्य कौन है! अतः हे मेरे सोम प्रभु! मैं तो तुम्हीं से दिशा पूछता हूँ। मैं दिग्भ्रान्त हो रहा हूँ, तुम कुतुबनुमा यन्त्र की सुई बनकर मुझे दिशा दर्शाओ। यदि तुमसे दिशा–ज्ञान न मिला, तो मेरा जीवन–पोत भव–सागर में डूबकर नष्ट–भ्रष्ट हो जायेगा। हे प्रभु! मुझ भूले को सही राह दिखाओ, मुझ भटके को गन्तव्य लक्ष्य पर पहुँचाओ।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

बोध कथाएँ

● **महात्मा आनन्द स्वामी**

स्वामी जी ने **''ब्रह्म ज्ञान क्या है?''** पर कथा सुनाते हुए कहा प्रकृति की वास्तविकता को समझकर इससे छुटकारा पा लेना ही ब्रह्मज्ञान है। इससे मुक्ति पाये बिना ब्रह्मदर्शन नहीं होता। परन्तु यह प्रकृति माया इतनी लुभानेवाली है कि इसके जाल में फँसा व्यक्ति तभी समझता है, जब नाक तक पानी आ जाता है **''आत्मा ही ब्रह्म को जान सकती है''** पर कथा सुनाते हुए कहा जड़ देवता, अग्नि, वायु या मनुष्य की इन्द्रियाँ ब्रह्म को सर्वथा नहीं जान सकती, उसे केवल इन्द्र अर्थात् आत्मा ही जान सकता है। **''जिन खोजा तिन पाइयाँ''** पर कथा सुनाते हुए कहा अजर, अमर, पाप से रहित आत्मा ही जानने और खोजने की वस्तु है। जो इनको जान लेता है, वह सब लोकों को प्राप्त कर लेता है सभी इच्छाओं को पूर्ण कर लेता है।

आगे पढ़ेंगे 2 लघु कथाएँ

जीवात्मा की कहानी

आत्मा क्या है? इसके सम्बन्ध में महर्षि नारद की सुनाई एक कहानी सुनिये।

पुरंजन नाम का एक राजा था किसी समय में। एक बार उसे इच्छा हुई कि किसी नगर में जाकर रहूँ। कई नगर उसने देखे, कोई भी उसे पसन्द नहीं आया। तब हिमालय के दक्षिण में उसने एक नौ द्वारों वाली नगरी देखी। यह भी देखा कि उस नगरी में एक सुन्दरी भी रहती है। दस सेवक उसकी सेवा करते हैं। पाँच फन वाला एक सर्प सदा उसकी रक्षा करता है। उस स्त्री ने भी पुरंजन राजा को देखा।

दोनों एक–दूसरे को देखते ही एक–दूसरे पर मोहित हो गये। पुरंजन राजा उस नगरी में गया। उस स्त्री ने उसको अपना स्वामी बना लिया। दोनों इस नगरी में रहने लगे। रहते–रहते वर्षों व्यतीत हो गए। इनके कितने ही बच्चे भी हुए। तब अन्त में पुरंजन राजा का शरीर ढीला होने लगा। कितने ही रोगों ने उसे दबा लिया। तब एक दिन दुःखी होकर उसने वह नगरी छोड़ दी।

यह सारी कथा वास्तव में आत्मा की कहानी है, क्योंकि पुरंजन राजा कोई दूसरा राजा नहीं, यही आत्मा है और नौ द्वारों वाली जिस नगरी में आकर उसने निवास किया, वह नौ द्वारों और आठ चक्रों वाला यह मानव–शरीर है। वेद भगवान् ने इस नगरी का वर्णन करते हुए कहा–

अष्टचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या।
तस्यां हिरण्ययः कोशः स्वर्गो ज्योतिषावृतः।।

आठ चक्रों और नौ द्वारों वाली यह वह पुरी है, जिस कोई जीत नहीं सकता। इसमें एक चमकते हुए प्रकाश में परमात्मा के प्रकाश से आवृत वह आत्मा बैठा रहता है, जो अपने–आप में सुख–रूप है।

जिस नगरी का वेद भगवान् ने वर्णन किया है, वह मनुष्य का यह शरीर है। इसके नौ द्वार हैं–दो आँखें, दो कान, दो नथुने, एक मुख और दो मल और मूत्र त्यागने के द्वार। यह है नौ द्वारों वाली आयोध्या नगरी। इसमें आठ चक्र हैं–मूलाधार चक्र, स्वाधिष्ठान चक्र, मणिपूरक चक्र, अनाहतचक्र, हृदयचक्र, विशुद्धिचक्र, आज्ञाचक्र और ब्रह्मचक्र। इस नौ द्वारों और आठ चक्रों वाली नगरी में बुद्धि नामक सुन्दर स्त्री रहती है। दस इन्द्रियाँ उसके दस सेवक हैं और पाँच प्राण–पाँच फनों वाला वह सर्प है, जो इस नगरी की रक्षा करता है।

इस नगरी में आया है वह पुरंजन राजा–वह जीवात्मा– और जब इस नगरी को छोड़कर निकला तो विदर्भ के राजा के नगर में जकार एक कन्या के रूप में उत्पन्न हो गया। वह कन्या बहुत रूपवती और गुणवती थी। विदर्भ के राजा ने उसका नाम रखा–अपूर्व कन्या। यह बड़ी हुई तो मलयध्वज नाम के राजा के साथ इसका विवाह हो गया। दोनों सुख से रहने लगे। परन्तु तभी एक दिन राजा मलयध्वज शीशे में अपना मुख देख रहे थे तो सिर में श्वेत केश दिखाई दिया। केश को देखकर वह अपूर्व कन्या से बोले–''रानी! मैं तो अब जंगल में जाकर भगरान् का भजन करूँगा, तुम चाहो तो इस राज्य को चलाओ।''

रानी ने कहा–''आपके बिना मैं कैसे रहूँगी? जहाँ आप, वहीं मैं आपके साथ चलूँगी।''

दोनों वन में पहुँचे। आश्रम बनाकर रहने लगे। समय तो प्रत्येक स्थान पर व्यतीत होता है, वन में भी बतीने लगा। अन्ततः वह समय भी आया, जब मलयध्वज का देहान्त हो गया। रानी अपूर्व कन्या ने रो–रोकर अपना बुरा हाल कर लिया। वन में और कोई था नहीं। रोते–पीटते उसने वन में से लकड़ियाँ एकत्रित कीं। एक चिता बनाई। मलध्वज की लाश को उसके ऊपर

शेष पृष्ठ 04 पर ☞

आर्य समाज : विश्व कल्याण को समर्पित आन्दोलन

● रामनिवास गुण ग्राहक

आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानंद सरस्वती ने आर्य समाज के दस नियम बनाकर आर्यसमाज से जुड़कर काम करने वाले लोगों के सामने न केवल स्पष्ट लक्ष्य रखा बल्कि उस लक्ष्य को प्राप्त करने की पूरी कार्य योजना भी प्रस्तुत कर दी। आर्य समाज का सैद्धान्तिक आधार वेद है। वेद के बारे में ने केवल भारतीय धर्म शास्त्रियों की बल्कि विश्व के सभी निष्पक्ष विद्वानों की स्पष्ट मान्यता है कि वेद ईश्वर का दिया हुआ ज्ञान है। सुखद आश्चर्य यह है कि महर्षि दयानन्द ने वेद का व्याकरण और विज्ञान सम्मत जो भाष्य किया है उसे पढ़कर कोई भी इस बात पर उचित रीति से विश्वास कर सकता है कि वेद अपने आप में ऐसे ग्रंथ हैं जिनमें तर्क–विज्ञान और मानवोचित आचार–व्यवहार के विपरीत कुछ भी नहीं है। मानव के जीवन में काम आने वाले सम्पूर्ण ज्ञान–विज्ञान की सभी शाखाएँ वेद में हैं। कुल मिलाकर कह सकते हैं कि वेद इस विश्व ब्रह्माण्ड का ऐसा अटल संविधान है जिसके अनुसार इस पूरे विश्व का संचालन हो रहा है तथा मानव की सम्पूर्ण कर्म–फल व्यवस्था भी परमात्मा द्वारा दिए गए वेद ज्ञान के अनुसार ही होती है। ज्ञान–विज्ञान के ऐसे अक्षय स्रोत वेदों पर आधारित होने के कारण आर्य समाज का सैद्धान्तिक पक्ष बहुत ही व्यापक और बहुत उदार है। आर्य समाज के छटवें नियम में महर्षि दयानन्द लिखते हैं– **"संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना"।**

सुधी पाठकगण! तनिक विचार करें कि भारतभूमि का एक महामानव एकान्त स्थान में बैठकर जब आर्य समाज के नियम लिख रहा होगा तो उसकी कार्य योजना में कोई वर्ग विशेष या कोई देश विशेष न होकर धरती तल के सब मानवों का उपकार था। महर्षि दयानंद की दृष्टि में सब मनुष्यों के उपकार का अर्थ है– सबकी शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति। जब सब मनुष्यों की सर्वाङ्गीण उन्नति को आर्य समाज का मुख्य काम घोषित किया तो ऐसा नहीं कि सर्वाङ्गीण उन्नति की रूप रेखा या कार्य योजना न बनाई हो।

आर्य समाज के शेष नियमों में और महर्षि दयानन्द के सत्यार्थ प्रकाश आदि ग्रंथों में मानव की समग्र उन्नति के सब घटक बिखरे पड़े हैं। ऋर्षि दयानन्द का स्पष्ट मानना है कि– **"सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी (कार्य) मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है।"** इस बात से संसार में कोई भी बुद्धिमान इनकार नहीं कर सकता कि मनुष्य का कल्याण सत्य के सुनने में, सत्य को समझने में, सत्य बोलने में और सत्य के अनुकूल व्यवहार करने में ही है। आर्य समाज के चौथे नियम में ऋषि दयानन्द सत्य की महिमा बताते हुए लिखते हैं– **"सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।"** आज मनुष्य को सत्य सुनना, सत्य बोलना व सत्य के अनुकूल चलना घाटे का सौदा दिखता है। झूठ के सहारे जीवन की सुख–सुविधाएँ जुटाने में लगा हुआ मनुष्य कभी सार्वजनिक रूप से झूठ का महिमा–मण्डन नहीं कर सकता। हमें समझना पड़ेगा कि झूठ के सहारे मिलने वाली सुख–सुविधा और समृद्धि उतनी ही टिकाऊ होती है जितना कि झूठ। इसलिए आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि ने सत्य के ग्रहण करने और असत्य को त्यागने के लिए सदैव तैयार रहने का आदेश दिया है।

सत्य के ग्रहण करने व असत्य को छोड़ने की जब बात की जाए तो एक बड़ा सहज प्रश्न उठता है कि सत्य–असत्य की जाँच–परख करना कोई सहज काम तो नहीं। ऐसे में निर्विवाद सत्य को पहचानना जन–सामान्य के लिए बड़ी विकट समस्या होगी। निर्विवाद व विश्वसनीय सत्य का मूल आधार क्या हो, जिसके सहारे सत्य को स्वीकार किया जा सके? महर्षि दयानन्द तीसरे नियम में लिखते हैं– **"वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, वेद का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना सब आर्यों का परमधर्म है।"** यह पहले कहा जा चुका है कि संसार में प्राप्त समस्त ज्ञान–विज्ञान का मूल स्रोत वेद ही हैं। भारतीय धर्मशास्त्र की परम्परा में वेदों को स्वतः प्रमाण या परम प्रमाण स्वीकार किया जाता रहा है। शेष सब धर्मशास्त्र वेद के अनुकूल होने पर ही प्रामाणिक हैं। वेद–विरुद्ध किसी ग्रंथ या मान्यताओं को प्राचीन काल में कभी श्रद्धा की दृष्टि से नहीं देखा गया। धरती तल पर वेद ही ऐसे ग्रंथ हैं जिनको पूर्ण और प्रमाणिक सत्य के रूप में सदा से ही स्वीकारे गए हैं। आज भी डंके की चोट पर यह घोषणा की जाती रही है कि वेद का एक भी सिद्धांत, कोई भी वचन ऐसा नहीं जो असत्य हो अप्रामाणिक हो, अवैज्ञानिक हो, अमानवीय हो या अव्यावहारिक है। वेदों के अतिरिक्त संसार में कोई भी ग्रंथ ऐसा नहीं हो पूर्ण रूप से सत्य, वैज्ञानिक व मानवीय होने का दावा कर सके। अगर कोई ऐसा दावा करता भी है तो उस दावे को प्रमाणित करना, सिद्ध करना कभी संभव नहीं। यह एक बात स्पष्ट कर देना बहुत आवश्यक है और वे यह कि वेदों के जो भाष्य आज सरकार द्वारा महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों में पढ़ाए जाते हैं वे व्याकरण शास्त्र के अनुसार सर्वथा शुद्ध नहीं हैं, उनमें व्याकरण विद्या के मापदण्डों का पूर्ण पालन नहीं किया गया, इसलिए आर्य समाज महर्षि दयानन्द के अतिरिक्त किसी देशी–विदेशी विद्वानों के वेद भाष्य को प्रामाणिक नहीं मानता।

आर्य समाज की सबसे बड़ी विशेषता व सर्वोपरि गुण यही है कि यह आर्य समाज परमपिता परमात्मा द्वारा दिए गए वेद ज्ञान पर आधारित है। परमात्मा ने अपनी सम्पूर्ण सृष्टि में किसी के साथ किसी भी प्रकार का भेदभाव या पक्षपात नहीं किया तो उसके दिए संविधान वेद को अपना सर्वस्व मानने वाली आर्य समाज भी मानव–मानव के बीच किसी प्रकार का भेदभाव कैसे करता। "मनुष्य मात्र का पूर्ण हित करने की भावना" यह सोच उसी की हो सकती है जो मनुष्य मात्र का सहज कल्याण करने वाले परमात्मा के बताए गए अटल संविधान वेद को अपना मूल आधार माने ऐसा मानने वाली लोकोपकारी संस्था आर्य समाज भला किसी क्षेत्रीय, जातीय अथवा देशीय सीमा में बँधकर कैसे रह सकती है? महर्षि दयानन्द अपनी उदारता व पूरी मानवता को समर्पित उदात्त भावना को प्रकट करते हुए लिखते हैं– **"यद्यपि मैं आर्यावर्त्त में (भारत) देश में उत्पन्न हुआ और बसता हूँ, तथापि जैसे इस देश के मतमतान्तरों की झूठी बातों का पक्षपात न कर याथातथ्य प्रकाश करता हूँ, वैसे ही दूसरे देशस्थ व मतवालों के साथ भी वर्त्तता हूँ। जैसा स्वदेश वालों के साथ मनुष्योन्नति के विषय में वर्त्तता हूँ, वैसा विदेशियों के साथ भी, तथा सब सज्जनों को भी (ऐसा) वर्त्तना योग्य है।"**

आर्य समाज ऐसी विलक्षण संस्था है कि धार्मिक, सामाजिक और राष्ट्रीय स्तर पर व्याप्त समस्त पाखण्डों–अंधविश्वासों, कुरीतियों व अनैतिकताओं के विरुद्ध पूरी शक्ति और साहस के साथ संघर्ष करके मनुष्य मात्र के कल्याण की कामना के साथ भूले–भटके लोगों को धर्म और ईश्वर के सच्चे स्वरूप का भी ज्ञान देती है।

आर्य समाज, श्री गंगानगर
मो. 7597897991, 9079039088

आचार्य डॉ. वागीश की माता सावित्री देवी नहीं रहीं

अन्तर्राष्ट्रीय आर्य विद्वान आचार्य डॉ. वागीश शर्मा की आदरणीया माता सावित्री देवी जी ने 23 जून 2018 को 93 वर्ष की आयु में अपना नश्वर शरीर छोड़ दिया। श्रीमती सावित्री देवी जी का जन्म 93 वर्ष पूर्व उत्तर प्रदेश के बिजनौर जिले के नजीबावाद नगर में श्री पं. मुन्नालाल शर्मा के परिवार में हुआ था। श्री पं. मुन्नालाल जी शर्मा अपने क्षेत्र के सुप्रसिद्ध वैद्य थे। अतः उन्होंने अपने सभी पुत्र–पुत्रियों को आयुर्वेदिक चिकित्सा का ज्ञान कराया। श्रीमती सावित्री देवी जी का विवाह संस्कृत, व्याकरण तथा आयुर्वेद के विद्वान श्री पं. ज्योति स्वरूप जी आचार्य के साथ हुआ। श्री पं. ज्योति स्वरूप जी आचार्य तब अविभाजित भारत के लाहौर में आर्य समाज के किसी महाविद्यालय में प्राचार्य थे। भारत विभाजन के कारण वे लाहौर छोड़कर अमृतसर आ गये वहाँ निक्कीसुइयां नामक स्थान पर गुरुकुल की स्थापना की।

तद्नन्तर एटा (उ.प्र.) में स्वामी ब्रह्मानन्द जी दण्डी द्वारा आर्ष गुरुकुल की स्थापना होने पर श्री ज्योति स्वरूप जी ने आर्ष गुरुकुल एटा के प्राचार्य पद का कार्यभार सम्भाला। श्रीमती सावित्री देवी जी ने भी तब से एटा गुरुकुल के उस प्रांगण में छात्रों की मातृस्नेह के साथ देखभाल तथा आसपास के ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं की निःशुल्क चिकित्सा तथा उन्हें कुछ उपयोगी शिक्षा एवं विचार प्रेरणा देना शुरु कर दिया। तबसे यही उनकी जीवनचर्या बनी रही। उनके दो पुत्र तथा एक पुत्री हैं। ज्येष्ठ पुत्र डॉ. वागीश आचार्य गुरुकुल एटा तथा आर्य समाज के क्षेत्र में कार्यरत हैं। छोटे पुत्र डॉ. राजीव पाराशर चिकित्सा के क्षेत्र में हैं। पुत्री डॉ. गार्गी उपाध्याय मथुरा में डिग्री कॉलेज में प्राचार्या पद पर हैं।

सब प्रकार से संतुष्ट जीवन जी कर अपने आशीर्वादों की वृष्टि करते हुए माता सावित्री जी विदा हो गयीं। प्रादेशिक सभा, डी.ए.वी. एवं आर्य जगत् की ओर से आर्य रत्न डॉ. पूनम सूरी जी का शोक सन्देश माता जी के शांति यज्ञ पर सभा मंत्री श्री एस.के. शर्मा ने पढ़कर सुनाया और दिवंगत आत्मा की शांति की प्रार्थना की।

हमारा आना–जाना

● भद्रसेन

हम सब का इस संसार में आना एक सन्तान के रूप में होता है। हजारों के देखते–देखते हम पालन–पोषण, शिक्षा, प्रगति के अवसर प्राप्त करते हुए अनेकों से अनेक तरह के संबंध बनाते–बढ़ाते हैं। इन सम्बन्धों का ताना–बाना ही जीवन का दूसरा नाम है। इन्हीं सम्बन्धों की सुस्थिति से ही हमारा जीवन आगे से आगे बढ़ता हुआ सफल होता है। इस सफलता का सारा श्रेय हमारे आपके सम्बन्धों के सच्चा–सुच्चा होने पर निर्भर है। तभी तो सभी अपने सम्बन्धियों से सचाई की आशा करते और रखते हैं। अतः इस आशा की मांग है कि हम इन सम्बन्धों को खिड़े–मत्थे पूरी तरह से पालें। इन सम्बन्धों की जड़ परिवार है, इस प्रथम रूप को सजाने वाला परम पिता परमात्मा ही है। अर्थात् उस के सजाए प्रकृति नियम ही हैं। प्रत्येक रचनाकार अपनी रचना को आगे से आगे सफल देखना चाहता है। इसलिए इन सम्बंधों के सजाने वाले की इच्छा को सही रूप में रखना ही उस सत्ता को स्वीकार करना कहा जा सकता है। यही उसकी आज्ञा का पालन है, और यही उसकी भक्ति, पूजा का मूल भाव, उद्देश्य कहा जा सकता है। किसी भक्त की भक्ति तभी सफल कही जा सकती है जब वह अपने भगवान से जुड़ा है। जैसे भक्त तथा भगवान का सम्बन्ध अपने–अपने स्तर पर स्व कर्त्तव्य के करने से कृतकृत्य होता है। उदाहरण के लिए कोई भक्त भगवान की भक्ति का अर्थ भजन करना समझता है। ऐसी स्थिति में उस भक्त सच्चा–सुच्चापन यही है कि वह दिल से ईमानदारी से बिना दिखावे के भजन में तल्लीन हो।

जैसे कि प्रत्येक व्यक्ति यही चाहता है कि मेरे भक्त, सेवक, साथी, सम्बन्धी हर स्थिति में हर समय मेरे प्रति सच्चे–सुच्चे हों। ऐसी ही स्थिति में वे मेरे प्रिय, स्नेही कहे जा सकते हैं। ऐसे ही इस जग के बनाने वाले की भी यही इच्छा, आशा, आज्ञा कही जा सकती है कि उसने इस जग को जिस दृष्टि से सजाया है, हम उसी दृष्टि को सही रूप में सामने लायें। यह सारा संसार हर तरह से आपस के सम्बन्धों का सुन्दर रूप है। यहाँ कहीं किसी बनी वस्तु के हिस्से आपस में जुड़े हैं, तो कहीं पति–पत्नी, माता–पिता–सन्तान आपस के सम्बन्धों से जुड़े हैं। अतः इन सम्बन्धों को जोड़ने वाले की यही चाहना है, कि यह सम्बन्ध सफल हों।

जग में जो कुछ भी माना जाता है, वह अपने अंशों, कारणों का मेल रूप ही है। इस जग में बनने वाली चीज़ें दो प्रकार की हैं। एक तो हमारे बर्ताव में आने वाली भौतिक चीज़ें है। इन चीज़ों में हम स्पष्ट रूप में उस–उस के अंशों, कारणों का मेल (संयोग, सम्बन्ध) देखते हैं। इन में से कुछ चीज़ों का सम्बन्ध हमारे जैसे करते हुए स्पष्ट दीखते हैं। इस जग में दूसरी सामने आने वाली चीज़ है–इन वर्तें जाने वाली भौतिक चीज़ों को बर्तने वाले जीवित प्राणी। इनका जन्म, जीवन भी शरीर–इन्द्रिय–मन (अन्तःकरण) प्राण आत्मा के संयोग से सामने आता है। ज्ञान–कर्म इन्द्रिय, प्राण आदि का कार्य हम अपने जीवन व्यवहार में स्पष्ट देखते हैं। तभी तो आँख आदि इन्द्रिय अपना–अपना कर्त्तव्य निभाती हैं।

जैसे कि हम प्रतिदिन के व्यवहार में देखते हैं कि अनेक यंत्र अपना–अपना कार्य करते हैं। ये बल्ब, पंखा आदि यंत्र तभी कार्य करते हैं, जब बिजली–बटन–यंत्र का परस्पर ताल–मेल होता है। जैसे आज बल्व–टयूब–पंखा, रेडियो, दूरदर्शन, फ्रिज आदि अनेक यंत्र हमारे व्यवहार में बर्ते जा रहे हैं, ऐसे ही हमारे जीवन व्यवहार में देखने–सुनने–बोलने–चलने आदि की अनेक क्रियाऐं होती हैं। इन सबके पीछे भी कुछ का ताल–मेल होता है। यहाँ इन्द्रियाँ यंत्र की तरह होती हैं, मन बटन के समान है और आत्मा बिजली के तुल्य इन्द्रियों को चेतना, शक्ति, प्रेरणा देती है। इनका सम्बन्ध कर्मफलदाता, न्यायकारी परमेश्वर हर जीव के कर्मों के अनुसार ही करता है। इन सब का ताल–मेल जब तक बना रहता है तब तक हमारा जीवन चलता रहता है।

शरीर–इन्द्रिय–मन–आत्मा का यह ताल–मेल सम्बन्ध जब कभी किसी दुर्घटना, विशेष रोग के कारण या लम्बे समय के बाद ढीला पड़ जाता है। तो वह सम्बन्ध विच्छेद–मौत, वियोग का कारण बन जाता है। यही बात हम अपने चारों ओर इन बर्ते जाने वाली चीज़ों में भी देखते हैं। जीवों और चीज़ों के आने–जाने की व्यवस्था, प्रक्रिया एक जैसी ही है। इसलिए ज़रूरत इस बात की है, कि इस बर्ते जाने वाली चीजों से ही अपने जीवन को समझें। उनको और जीवन को सही ढंग से वर्तकर, जीकर अपने आप को सफल बनायें।

इस संसार में हर आने वाला देर–सवेर यह अनुभव करता है कि यहाँ आकर बहुत कुछ किया जा सकता है। इसलिए प्रत्येक का जीवन बहुत कुछ मन पसंद करने का एक स्वर्ण अवसर है। जैसे कि विद्यालय, महाविद्यालय में किसी को पढ़ने का अवसर मिलता है। यदि वह इस अवसर का लाभ उठाता है, तो वह पढ़ा–लिखा कहलाता है। फिर इसके आधार पर सब जगह तरक्की करता है। ऐसे ही किसी को कहीं परीक्षा का अवसर अथवा साक्षातकार का या उच्च स्तर पर खेल का अवसर प्राप्त होता है। जो उस अवसर का लाभ उठाता है वही सफल होने से जहां प्रशंसा प्राप्त करता है, वहाँ आगे के लिए वह अपना स्थान भी सुनिश्चित कर लेता है।

हां, हमने यह पहले विचार किया है कि सभी का संसारी जीवन आपस के अनेक प्रकार के रिश्तों पर निर्भर है। ऐसी स्थिति में जीवन को सार्थक सफल बनाने वाले सम्बन्धों को सच्चे–सुच्चे रूप में निभाना कम से कम संसारी जीवन की सफलता है। इन सम्बन्धों को सजाने वाला जग का सर्जनहार भी यही चाहता है कि संसार में आने वाला प्रत्येक प्राणी सुनहरे मौके का लाभ उठाकर अपने आप को सफल, सुखी बनाए।

निःसन्देह भारतीय परंपरा में ईश्वरदर्शन, मुक्ति मानव जीवन का चरम लक्ष्य माना जाता है। यह भी तभी सम्भव है, जब पहले प्रतिदिन का जीवन शांत, सफल होता है। तभी तो कहा–**'अशान्तस्य कुतः सुखम्'** गीता 2.66। यह सफलता भी स्वस्थ रहते हुए, स्वच्छता के पालन, नशामुक्ति पूर्वक रिश्तों के निभाने से ही होती है। जैसे कि हम किसी की करनी को ईमानदारी से निभाने पर ही याद करते हैं।

182–शालीमार नगर
होशियारपुर (पंजाब)

☞ *पृष्ठ 02 का शेष*

बोध कथाएँ...

रख दिया। अपने हाथ से उसने चिता को आग लगाई। स्वयं भी उसमें बैठ गई। अग्नि प्रज्वलित हुई। चहुँ ओर लपटें फैलने लगीं। रानी अपूर्व कन्या अब भी रो रही थी। उसके क्रन्दन से वन गूँज रहा था। तभी उन लपटों में से आवाज़ आई–''पुरंजन! ओ पुरंजन!''

रानी ने आश्चर्य से इधर–उधर देखा, कोई भी उसे दिखाई नहीं दिया, परन्तु ध्वनि ने फिर कहा–पुरंजन! रोना बन्द करो। तुम स्त्री नहीं हो, रानी नहीं हो, अपूर्व कन्या भी नहीं हो।''

रानी ने आश्चर्य से कहा–''तुम कौन हो, जो आवाज़ दे रहे हो?''

ध्वनि ने कहा–''पहले यह समझो कि तुम अपूर्व कन्या नहीं हो। तुम पुरंजन हो। कभी तुम पुरुष थे। अब स्त्री हो। वास्तव में तुम स्त्री–पुरुष भी नहीं हो।''

रानी ने कहा–''और तुम कौन हो?''

ध्वनि ने कहा–''मैं तुम्हारा अज्ञात नाम वाला मित्र हूँ और मैं ही तुम्हारा मित्र हूँ, दूसरा कोई मित्र नहीं, कोई सम्बन्धी नहीं, कोई पिता या पत्नी नहीं, पुत्र या पुत्री नहीं।''

तब उस पुरंजन ने अपने इस मित्र को पहचाना। तब उसने समझा कि अग्नि उसे जला नहीं सकती। इसके लिए, मलयध्वज के लिए या किसी भी आत्मा के लिए कोई मृत्यु नहीं और सबका मित्र वह एक है, जिसे लोग परमात्मा, प्रभु, ईश्वर, परमेश्वर, परम ब्रह्म, भगवान्, शिव, शंकार, नारायण, और कितने ही नामों से पुकारते हैं।

यह सारी जीवात्मा की कहानी है जो शरीर के साथ मिलकर कभी अपने–आप को अपूर्व कन्या कहता है, कभी पुरंजन, कभी मलयध्वज, कभी विदर्भराज, कभी कुछ और। कई प्रकार के, सहस्त्रों, लाखों, करोड़ों नाम वह अपनाता है, करोड़ों रूप अपनाता है।

ओ३म् की महिमा

यम और नचिकेता की कथा तो आपने सुनी है। यम ने अपने घर में आये मेहमान से तीन वर माँगने के लिए कहा। नचिकेता ने दो वर माँग लिये। अपने लिए नहीं, अपितु दूसरों के लिए। यम ने कहा–''कुछ अपने लिए भी तो माँग!''

नचिकेता ने कहा–''मेरे लिए ही वर देना चाहते हो तो बताओ कि वह क्या है, जिसे ईश्वर कहते है?''

यम ने कहा–''यह न पूछ। कोई और वस्तु माँग ले। मैं तुझे बेअन्त धन और दौलत दे सकता हूँ। सारी पृथिवी का राज दे सकता हूँ। दीर्घायु दे सकता हूँ। सुन्दर स्त्रियाँ दे सकता हूँ। भोग–विलास के सामान दे सकता हूँ।''

आजकल का कोई नवयुवक होता तो शायद कहता–''ला, यही दे दे।'' परन्तु नचिकेता ने कहा–''नहीं, यह सब–कुछ मुझे नहीं चाहिए, यह सब–कुछ नाश होने वाला है। मुझे वह दे, जो कभी नाश नहीं होता। अन्त में मरना है मुझे। मरने के पश्चात् तेरे पंजों में न फँसूँ, वह मार्ग बता मुझे।''

जब वह किसी भी उपाय से नचिकेता को नहीं मना सका, जब किसी भी रीति से

शेष पृष्ठ 05 पर ☞

आधुनिक शिक्षा एवं बाल संस्कार

पेड़ों पर उगते पेड़े?

● देव नारायण भारद्वाज

आचार्य महेश चन्द्र गर्ग अकेले ही एक महान संस्था का कार्य करते हैं। यहाँ पर मैं उनके सम्पूर्ण कार्यकलाप का दिग्दर्शन कराने नहीं चला हूँ। उनका जो बाल चरित्र निर्माण का कार्य है, वह अद्‌भुत एवं उदाहरणीय है। कविता, भाषण, मंत्र, पाठ प्रतियोगिताओं के माध्यम से बच्चों में जो संस्कारों का सृजन होता है वह प्रखर एवं प्रभोत्पादक तो है ही, इसके अतिरिक्त अपने निर्देशन में चलने वाले सभी माध्यमिक विद्यालयों में सत्र शुभारंभ पर जो वे विद्यारंभ संस्कार कराते हैं, वह बच्चों के सच्चरित्र रूपी मनभावन भवन की नींव का काम करता है। उनके कार्य का केन्द्र सासनी (हाथरस) होते हुए भी अपनी मासिक पत्रिका **'हितोपदेशक'** के द्वारा उनकी पहुँच पूरे भारत में रहती है। वैदिक विद्यालय सासनी में प्रविष्ट छात्रों के विद्यारंभ संस्कार हेतु इस वर्ष कन्या गुरुकुलसासनी की मुख्याधिष्ठात्री श्री मान्या कु. कमला स्नातिका को आमंत्रित किया था, जिन्होंने अपनी ब्रह्मचारिणियों को साथ लेकर मधुर मन्त्रोच्चारण पूर्वक यज्ञ एवं गायन कराया, फिर बच्चों को विद्यारंभ सम्बन्धी शास्त्रीय उपदेश दिया।

प्रायः ऐसे अवसरों पर विद्यालय के बच्चों से बात करने के लिए आचार्य श्री इस लेखक को भी बुला लेते हैं। इस बार जब मैं वहाँ गया तो बच्चों से वार्ता की सामग्री मुझे बस से उतरते ही अड्डे पर मिल गयी। सासनी के अमरूद दूर-दूर तक अपनी मिठास के लिए प्रसिद्ध हैं। उत्तम श्रेणी के अमरूद तो प्रातःकाल की मण्डी से ही बाहर को निर्यात हो जाते हैं। शेष बच्चे अमरूद दिनभर अड्डे के आसपास ठेलों पर बिकते रहते हैं। ठेले वाले ज़ोर-ज़ोर की आवाज लगाकर अपने अमरूदों की गुणवत्ता का बखान कर ग्राहकों को अपनी ओर खींचते हैं। प्रातः से सायं तक उनके वाक्य तो बदलते रहते हैं, किंतु तत्काल जो वाक्य मैंने सुने उन्हें आप भी सुनिये।

एक ठेले वाला बोला-**''लो जे हैं पेड़े''**। दूसरा ठेले वाला बोला -**''पेड़े वे हैं कि जे हैं पेड़े''**। तभी तीसरा ठेले वाला बोला **''पेड़े न उसके न तेरे-पेड़े है मेरे''**। यह तीनों वाक्य सुनकर मुझे हँसी आ गई, और मैं उस बाजार से निकल कर बड़े मनोविनोद के वातावरण में वैदिक विद्यालय के अतिथि, शिक्षक एवं विद्यार्थियों से भरे हुए सभागार में पहुँच गया। यज्ञ की ब्रह्मा और उपदेष्टा-पूज्य कमला स्नातिका जी के संस्कार-सम्बोधन के बाद मुझे भी बच्चों से संवाद करने का आदेश दिया गया। मैंने अपनी बात तीनों ठेले वालों द्वारा कहे गये वाक्यों को दोहराते हुए प्रारंभ की। अमरूद के ठेले वाले हों या अन्य वस्तुओं को बेचने वाले सभी अपनी भाषा को अलंकार पूर्वक ही बोलते हैं। तीनों ठेलेवाले बेच रहे अमरूदों का नाम नहीं ले रहे थे, किंतु पेड़े की उपमा से महिमा मण्डित करके ग्राहकों को आकर्षित कर रहे थे। अमरूद मीठा व स्वादिष्ट हो भी सकता है, नहीं भी हो सकता है। पर पेड़ा तो मीठा ही मीठा होगा। स्वास्थ्य एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता के कारण अमरूद पेड़े की तुलना में कहीं अधिक बजनदार है, किंतु आर्थिक मूल्य की दृष्टि से पेड़ा अमरूद की अपेक्षा बीस गुणा भारी ठहरता है।

मैंने बच्चों पूछा-अमरूद कहाँ से आता है? उन्होंने ठीक उत्तर दिया-बाग से, फिर पूछा-पेड़ा कहाँ से आता है? उन्होंने इसका भी ठीक ही उत्तर दिया-हलवाई की दुकान से । इस कथानक से बच्चों से सवांद करने की सरल भूमिका बन गयी। मैंने उन्हें बताया यह दोनों वस्तुऐं बाग व दुकान पर आने से पहले धरती माता के गर्भ में आती हैं। भू-पालक किसान ही इनका उत्पादन करके बाज़ार में पहुँचा देता है। अमरूद जैसे उपजते हैं वैसे ही बाजार में आ जाते हैं। अधिक गुणकारी होते हुए भी इनका मूल्य कम ही रहता है। भू-माता से उपजे गन्ने की खाँड, भूमि से निकले चारा-दाना को खाकर गोमाता के दूध से बने खोये को मिश्रित कर हलवाई स्वादिष्ट पेड़े बना देता है, और इसका मूल्य बहुत बढ़ा देता है। स्थान-स्थान के अमरूद प्रसिद्धि पाते हैं, पर अपनी ऋतु में ही मिल पाते हैं, किंतु बारहों महीने मिलने वाले पेड़े अपने स्वाद के कारण नगरों को विश्व प्रसिद्ध बना देते हैं, जैसे **'मथुरा व बदायूँ का पेड़ा'** कहते ही मुँह में पानी आने लगता है।

पता यह चलता कि प्रकृति के माध्यम से परमात्मा सभी वस्तुओं की कच्चे माल के रूप में उत्पत्ति करता है, और मनुष्य उन्हीं वस्तुओं से एक ही प्रकार की नहीं, आवश्यकतानुसार विविध वस्तुओं का निर्माण कर लेता है। सोना-चाँदी, लोहा आदि धातुएँ एवं हीरा-मोती आदि माणिक्य यदि तराशे व तपाये न जायें तो मिट्टी में ही पड़े रहें और उपयोगी मुद्रा व आभूषण न बन पायें। परमात्मा की प्राकृतिक सम्पदा को सुखदा-वसुधा बनाने का कार्य मनुष्य को करना पड़ता है। इसीलिए परमात्मा ने मनुष्य को सब जीवों से ऊपर अपने प्रतिनिधि के रूप में पृथ्वी पर भेजा है। अपने ब्रह्माण्ड के भू, अन्तरिक्ष एवं सूर्यलोक की भाँति उसे भी शरीर, हृदय एवं सिर का परिपूर्ण पिण्ड प्रदान किया है। सृष्टि के प्रारंभ में ही परमपिता परमात्मा ने बोल कर मार्ग दर्शन कर दिया है, जिसे श्रुति कहते हैं। आदि ऋषियों ने इस श्रुति-दर्शन को देखा और आगे आने वाले अपने शिष्य ऋषियों को इस श्रुति की संस्कृति को सुनाये जाने की परंपरा स्थापित कर दी। वेद में वर्णित पदों का निहितार्थ उन्होंने सृष्टि के पदार्थों का अवलोकन कराके मनुष्यों के मस्तिष्क में प्रकाशित कर दिया। इसके आभा-क्षेत्र में जो बना रहेगा वह मनुष्य से पितर-देव के महान् पद का अधिकारी बन जायेगा, और जो इसकी उपेक्षा कर देगा, वहीं पशु-राक्षस होने से बच नहीं पायेगा।

''मनीषिभिः'' पवते पूर्व्यः'' (साम 822) मननशील होकर व्यक्ति सनातन रचनाओं को पवित्र या रक्षित करता है। वह यम-नियम आदि साधनों से शाश्वत आनन्दमय आदि कोशों को सींचता है। तीनों शरीरों में निवास करने वाले जीवात्मा को प्रसिद्ध करता, संसार में मित्रता के लिए जीवनशक्ति को बढ़ाता और आनन्द की वर्षा करता। सत्संगति से वह कौन सी ऊँचाई है? जिसे वह प्राप्त नहीं कर सकता और कुसंगति से ऐसी कौन सी खाई है, जिसमें जाकर वह डूब नहीं जाता। चित्रकार ने विद्यालय-दर-विद्यालय घूमते हुए एक नन्हें भोल-भाले बालक का चित्र बनाया। इसके प्रदर्शन से उसने खूब प्रसिद्धि पायी व प्रभूत धन भी कमाया। बूढ़ा होते अनेक वर्षों बाद चित्रकार के मन में एक भयंकर वीभत्स मनुष्य का चित्र बनाने की कामना जाग उठी। जेल-दर-जेल भटकते हुए वह एक कैदी के सामने रुक गया और उसका चित्र बनाने की इच्छा प्रकट की। जब वह तैयार नहीं हुआ, तो उसे एक चित्र दिखाकर बताया-मेरा तो काम ही चित्र बनाने का है। प्रस्तुत चित्र को देखकर भयंकर कैदी जब दहाड़े मार कर रोने लगा, तब जेलर ने कहा भयंकर उत्पीड़क यातनायें दिये जाने पर भी तुमने कभी आँसू नहीं गिराये और आज इस चित्र को देखकर रो रहे हो। रोते हुए कैदी ने उत्तर दिया। वर्षों पूर्व बनाया गया चित्र मेरा ही है। मैं क्या से क्या हो गया।

ऐसी कई घटनायें देखने में आयी है, जिनमें भेड़िये जैसे हिंसक पशु किसी छोटे बालक को उठा ले गये, उसे मारा नहीं अपने साथ रख लिया। वह उन्हीं के साथ बड़ा होता गया। मानव की सन्तान समझ कर उसे पकड़ लिया गया। लाख प्रयत्न करने पर भी चलने-फिरने-बोलने खाने-पीने में वह पशु ही बना रहा। मानवीय स्वभाव सिखाते-सिखाते चिकित्सक थक गये और उसके प्राण पखेरू भी उड़ गये, किंतु वह मनुष्य नहीं बन पाया। सामयिक रूप से मिलने वाली माता की लोरियाँ, पिता की थपकियाँ एवं अध्यापक की झिड़कियाँ ही खोलती है वे खिड़कियाँ जिनसे निर्बाध आती शिक्षा, संस्कार की बयार बालकों के मानस को निरंतर परिष्कृत करती रहती हैं, जिससे वे पशुता की दुष्प्रवृत्तियों को छोड़कर मानवता की सद्‌वृत्तियों से अलंकृत हो उठते हैं।

'वरेण्यम्' अवन्तिका (प्रथम) रामघाट मार्ग, अलीगढ़-20200 (उ.प्र.)

☞ पृष्ठ 04 का शेष

बोध कथाएँ...

उसका हठ दूर नहीं कर सका, तो बोलाः

सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति तपांॅसि सर्वाणि च यद्वदन्ति।

यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते पदं संग्रहेणब्रवीम्योमित्येतत्।।

''सब वेद जिस महान् पद का वर्णन करते हैं, सब तपस्वी जिसकी बात कहते हैं, जिसकी इच्छा से ब्रह्मचारी अपना व्रत धारण करते हैं, उसे संक्षेप में तेरे सामने कहता हूँ-ओ३म् है वह।''

आगे चलकर फिर उसने कहा-

एतद्‌ध्येवाक्षरं ब्रह्म ह्येतदध्येवाक्षरं परम्।

एतद्‌ध्येवाक्षरं ज्ञात्वा यो यदिच्छिति तस्य तत्।।

''वास्तव में यही वह अक्षर है, जो ब्रह्म है। निश्चित रूप से यही अक्षर परम है। इसको जानकर जाननेवाला सब-कुछ पाता है, जिसकी वह इच्छ करता है।'' इससे भी आगे चलकर उसने कहा-

एतदालम्बनं श्रेष्ठं एतदालम्बनं परम्।

एतदालम्बनं ज्ञात्वा ब्रह्मलोके महीयते।।

''इसका आसरा सबसे बड़ा है। इसका आसरा सबसे ऊपर है। इसका आसरा लेकर आसरा लेनेवाला ब्रह्मलोक में आनन्द और महिमा को प्राप्त करता है।

क्रमशः

संत के लक्षण

● नरेन्द्र आहूजा 'विवेक'

थोड़े–थोड़े अंतराल के बाद ही कभी आसाराम तो कभी रामपाल तो अब राम रहीम खुद को कभी संत तो कभी स्यंभू भगवान कहने वाले इन पाखंडियों पर कानून का शिकंजा कसने पर इनके कुकर्मों की पोल खुलती है तो सामान्य व्यक्ति के मन में इन तथाकथित संत, बाबाओं के प्रति वितृष्णा का भाव उत्पन्न होता है। इन संत बाबाओं के कुकृत्य देखकर पैदा हुई वितृष्णा इनके भक्तों में निराशा उत्पन्न कर देती है। वह खुद को ठगा महसूस करने लगते हैं। ऐसे में एक सामान्य व्यक्ति किसे अपना आदर्श पथ प्रदर्शक माने ऐसा सोचने पर मजबूर हो जाता है। एक छोटी सी उपभोक्ता सामग्री खरीदने से पूर्व भी व्यक्ति उसकी कितनी जांच पड़ताल करके परखता है। उस उपभोक्ता सामग्री को मापदंडों पर कसता है। परन्तु किसी को अपने जीवन का आदर्श मानकर गुरु धारण करने से पूर्व किसी मापदंड पर नहीं कसा जाता। यह हमारी अबोधता ही तो है कि बिना संत के लक्षण जाने किसी पाखंडी को संत समझ कर उसे अपना तन, मन, धन समर्पित कर देते हैं और फिर वह हमारा शोषण करता है।

सही मायने में अपने इस शोषण के लिए हम खुद भी उतने जिम्मेदार हैं जितना वह पाखंडी। अपराध, अत्याचार, शोषण को सहना करना या प्रश्रय देना ये सभी बराबर के दोष हैं। किसी को भी संत समझकर अपना पथ प्रदर्शक व गुरु मानने से पूर्व वैदिक मान्यताओं की कसौटी पर भली–भाँति कस कर देख लेना चाहिए। जैसे कोई भी उपभोक्ता सामग्री बिना मापदंडों को परखे खरीदने पर हम अक्सर धोखा खा बैठते हैं और घटिया निम्नस्तरीय सामान हमारी परेशानी का कारण बनता है। उसी प्रकार बिना जाँचे परखे किसी को संत समझकर गुरु धारण करके अपना सर्वस्व समर्पण करते हुए हम अबोध उस पाखंडी के हाथों शोषण का शिकार हो जाते हैं।

अब प्रश्न उठता है कि वे कौन से लक्षण हैं जो किसी संत, महात्मा, गुरु, अध्यापक, पथ प्रदर्शक में आवश्यक रूप से होन चाहिएं। ये लक्षण महर्षि दयांनंद ने **सत्यार्थ प्रकाश के चौथे समुल्लास** में महाभारत उद्योग पर्व के श्लोकों को उद्घृत करते हुए लिखे हैं। प्रमुख रूप से निम्न लक्षण किसी भी संत, महात्मा, गुरु, अध्यापक में होने चाहिएं।

1. जिसे सम्यक् आत्मज्ञान हो अर्थात् वह आत्मा परमात्मा के सत्य स्वरूप संबंधों को भलीभाँति जानता हो। उसे जीव द्वारा ईश्वर की अनुभूति के मार्ग का भी बोध हो।

2. जो सुख–दुःख, हानि–लाभ, मान–अपमान, निन्दा–स्तुति में हर्ष या शोक कभी ना करे अर्थात् प्रत्येक परिस्थिति में समभाव बनाए रखे जिसका उदाहरण तुलसीदास ने राम के राज्यभिषेक और वनगमन के समय मुख और मन में समान भाव से दिया है। जिसे योगेश्वर कृष्ण ने गीता में स्थितप्रज्ञ कहा है और गीता के दूसरे अध्याय में ऐसे स्थिर बुद्धि स्थितप्रज्ञ के लक्षण बतलाए हैं।

3. जो कर्महीन, निकम्मा, आलसी कभी न रहे और जिसके मन को विषय संबंधी उत्तम–उत्तम पदार्थ भी आकर्षित न कर सकें। ऐसा ही व्यक्ति हम मनुष्यों का पथ प्रदर्शक होने योग्य है।

4. जो विद्वान सदैव धर्मयुक्त कर्मों का सेवन, अधर्म का त्याग, ईश्वर वेद और सत्य को जानने मानने वाला हो तथा ऐसी ही प्रेरणा दूसरों को दिया करे वही हम मनुष्यों का आचार्य होने के योग्य पंडित है।

5. जो व्यक्ति कठिन विषय को भी शीध्रतापूर्वक आसानी से जानकर समझा सके। वेदादि शास्त्रों में रुचि रखकर अध्ययन किया करे और जाने हुए वेदादि ज्ञान का दूसरों के उपकार के लिए प्रयोग करे, अपने स्वार्थ के बारे में न सोचे वही संत हमारा गुरु होने योग्य है।

6. हमारा पथ प्रदर्शक कभी किसी अयोग्य की इच्छा न करे। नष्ट हुए पदार्थ का शोक व किसी प्राप्ति पर हर्ष न करे। ऐसा सम्यक् बुद्धि वाला ही हमारा आचार्य होने योग्य है।

7. जिसकी वाणी सब विद्याओं और प्रश्नों के उत्तरों को करने में निपुण हो। यथायोग्य तर्क ग्रंथों के यथार्थ अर्थ का कुशल वक्ता हो वही हमारा पथ प्रदर्शक हो सकता है।

8. जिसकी प्रज्ञा सुने हुए सत्य अर्थ के अनुकूल और जिसका श्रवण बुद्धि के अनुरूप हो वही श्रेष्ठ धार्मिक पुरूष अपना पथ प्रदर्शक होना चाहिए।

लेकिन अंधश्रद्धा के वशीभूत इसके विपरीत गुणों वाले घमंडी अनपढ़ बिना वेदादि शास्त्र जाने लोगों को संत समझकर अपना गुरु बना लेते हैं। ऐसे मूढ़ दरिद्र होकर भी बड़े बड़े मनोरथ करते हैं। बिना कर्म पदार्थों के इच्छा रखते हैं। और फिर अपने इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए अपने अंधभक्तों का शोषण करते हैं। हमें अपने अध्यापक गुरु आचार्य के लक्षणों को भलीभाँति जानकर परखते हुए ही अपना पथ प्रदर्शक बनाना चाहिए।

602 जी एच 53 से. 20 पंचकूला हरियाणा
मो. 9467608686, 9878748899

हम प्राण–अपान की साधना से सुरूप बनें

● डॉ. अशोक आर्य

ऋग्वेद के प्रथम मण्डल का दूसरा सूक्त मित्रा वरुणा की आराधना के साथ समाप्त होता है। मित्रा से भाव प्राण अथवा प्राणशक्ति तथा वरुणा से भाव अपानशक्ति होने से यह सूक्त प्राण अपान अर्थात् प्राणायाम अर्थात् साँस की क्रिया से सम्बन्ध रखता है तथा नित्य प्राणायाम करने की प्रेरणा देते हुए समाप्त होता है।

जिस मनुष्य में प्राणशक्ति है, वही जीवित माना जाता है किन्तु मन्त्र की भावना है कि प्राणशक्ति होने पर मनुष्य मित्र व स्नेह की वृत्ति वाला होता है। यह सत्य भी है, जिसमें जीवन है, वह किसी से स्नेह भी करेगा तथा मित्रता भी करेगा किन्तु जिसमें यह जीवनीय शक्ति ही नहीं है केवल शरीर मात्र है, लाश मात्र है तो वह न तो किसी से स्नेहिल व्यवहार ही कर सकता है तथा न किसी से मैत्री की ही क्षमता उस में होती है।

जब मानव की अपान शक्ति ठीक से कार्य करती है तो मानव के अन्दर से दूसरों के प्रति जो द्वेष की भावना होती है, वह उससे निकल कर दूर हो जाती है। कोष्ठबद्धता की वृत्ति वाले लोग ईर्ष्यालु, द्वेषी तथा चिड़चिड़े स्वभाव वाले हो जाते हैं। साधारण भाषा में कोष्ठबद्धता को हम कब्ज के रूप में जानते हैं। जिस व्यक्ति को कब्ज होती है, उसका व्यवहार इन सब दोषों को अपने अन्दर समेट लेता है। न तो उसे भूख ही लगती है न ही बातचीत अथवा लोक व्यवहार की कोई कृति वह कर पाता है। बस प्रत्येक क्षण उसके अन्दर दूसरों से द्वेष, बात–बात पर चिढ़ना तथा ईर्ष्या की सी भावना उसमें दिखाई देती रहती है। जब उसकी यह कब्ज़ दूर हो जाती है तो हँसमुख चेहरे के साथ दूसरों का शुभचिन्तक हो कर खुश रहता है।

अतः जब मानव निरन्तर अपने प्राण तथा अपान की साधना करता है तो उसमें शुभ वृत्तियों का उदय होता है। अब वह सबका भला चाहने वाला बन जाता है। स्वयं भी खुश रहता है तथा अन्यों के लिए भी खुशी का कारण बनता है। इसलिए प्राणायाम की निरन्तर साधना से मानव में शुभ वृत्तियों का उदय होता है।

प्राणापान साधना के जो फल हमें दिखाई देते हैं, विभिन्न मन्त्रों के माध्यम से वे इस प्रकार हैः–

1. प्राणापान की साधना से हमारे अन्दर की सब अशुभ वासनाएँ, अशुभ वृत्तियाँ दूर हो जाती हैं तथा हम स्वच्छ, पवित्र हो जाते हैं।

2. पवित्र मानव ही प्रभु से साक्षात्कार करने के योग्य बनता है। अतः अशुभ वृत्तियों के दूर होने से उसमें प्रभु से साक्षात् करने की शक्ति आ जाती है।

3. पवित्र व्यक्ति अपनी पवित्रता को बनाए रखने के लिए व्यर्थ के कार्यों में अपना समय नष्ट नहीं करना चाहता, ऐसा करने से तो उसकी पवित्रता के ही समाप्त हाने का ख़तरा बना रहता है। जब वह अपने समय को व्यर्थ के कार्यों में नष्ट नहीं करता तो इस समय का कहीं तो सदुपयोग करना ही होता है। अतः वह दिव्यगुणों को पाने व बढ़ाने में इस समय का सदुपयोग करता है, जिससे दिव्यगुण का और भी आधिक्य हो जाता है।

4. अब उसको इन दिव्यगुणों की प्राप्ति की एक ललक सी ही लग जाती है, वह इन्हें पाने का और अधिक प्रयत्न करना चाहता है ताकि वह निरन्तर अपने इन गुणों को बढ़ाता रहे। इस निमित्त वह ज्ञान पाना चाहता है, सरस्वती का आराधक बन जाता है। जब वह ज्ञान का सच्चा पुजारी बन जाता है तथा अपने जो भी कार्य वह करता है, वह उसके ज्ञान पाने के साधक ही होते हैं।

5. जब वह सरस्वती की निरन्तर आराधना करने लगता है तथा वह उस ज्ञान स्वरूप परम ऐश्वर्य से युक्त प्रभु की उपासना करता है, उससे समीपता बनाता है, उसके पास बैठने लगता है तो वह सुरुप हो जाता है, सुरूपता के सब गुण उस में आ जाते हैं जो सूक्त संख्या तीन में बताए कार्यों को कर सके। अतः आओ हम ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के इस सूक्त तीन पर चिन्तन करें, विचार करें इसका स्वाध्याय करें।

पॉकेट 1/61 रामप्रस्थ ग्रीन सै.7 वैशाली
गाजियाबाद उ.प्र.भारत
दूरभाष; 9354835426, 01204127413

बुढ़ापा अभिशाप नहीं अपितु वरदान है।

● कपिलदेव राय

बुढ़ापा कोई रोग नहीं है। यह एक अनिवार्य अवस्था है। शैशव, किशोर, बालपन, कुमार, यौवन, प्रौढ़ तथा वृद्ध ये सभी मानव शरीर की विभिन्न अवस्थाएँ हैं। सौ वर्ष के उपरान्त को जरावस्था कहते हैं। अवस्थाएँ शरीर की होती हैं, आत्मा की नहीं। आत्मा की न कोई अवस्था होती है और न लिंग। आत्मा अमर होती है। भाग्यशाली लोग ही बुढ़ापे को प्राप्त करते हैं। जन्म और मृत्यु जीवन के दो छोर हैं। जब किसी बच्चे का जन्म होता है तो वह रोता है, किन्तु उसके परिजन हँसते हैं। जीवन के दूसरे छोर पर आप हँसते हुए जीवन की अंतिम यात्रा के लिए प्रस्थान करें और आप के परिजन आप के लिए आँसू बहाएँ यही मानव जीवन की सार्थकता है। रामचरित मानस कहता है– **जनमत मरत दुसह दुख होई।** गीता कहती है कि **'वासांसि जीर्णानि यथा विहाय.......'** दोनों कथन विपरीत हैं। सत्य यह है कि जन्म और मृत्यु के समय आत्मा को लेशमात्र भी दुःख व्याधि नहीं होती। व्याधि का सम्बन्ध मन और शरीर से है।

बुढ़ापे में तीन आवश्यकताएँ प्रबल होती हैं– स्वास्थ्य, सुरक्षा और सम्मान। वृद्धावस्था में इन्द्रियाँ शिथिल हो जाती हैं। कार्यशीलता में निरन्तर ह्रास होता है। पचास वर्ष तक यदि शरीर निरोग है तो बुढ़ापा अधिक कष्ट दायक नहीं होता। युवावस्था की भूलों को बुढ़ापे में भोगना पड़ता है। नियन्त्रित खान–पान एवं संयमित जीवन ही सुख का मूल है। सुरक्षा का सम्बन्ध आर्थिक संसाधनों से है। जो पेन्शन पाते हैं उन्हें औषध, भोजन, वस्त्र आदि समय पर उपलब्ध हो जाता है। किन्तु जिनके पास कोई आर्थिक स्रोत नहीं है, उन्हें शारीरिक तथा मानसिक दोनों प्रकार के कष्ट झेलने पड़ते हैं। बुढ़ापे की समस्याओं के निराकरण का दायित्व सामान्यतया तीन लोगों पर है– संतान, समाज तथा सरकार। संस्कारित संतान ही अपने अग्रजों की सेवा करती है। जो लोग जीवन भर पैसा कमाने में लगे रहते हैं अपनी संतानों तथा अपने परिवार की उपेक्षा करते हैं उन्हें बुढ़ापे में सम्मान प्राप्त नहीं होता।

स्वयं सेवी संस्थायें अपने सीमित साधनों से वृद्धजनों की कुछ सेवा कर सकती हैं। किन्तु वे वृद्धजनों को वह संन्तुष्टि प्रदान नहीं दे सकतीं, जो उन्हें अपनी संतानों से प्राप्त हो सकती है। सरकार सचेष्ट है। वह वृद्धजनों से भरण–पोषण और सुरक्षा के लिए कानून बना रही है। लेकिन भारतीय संस्कृति में कोई माता–पिता अपने भरण–पोषण के लिए अपनी संतान के विरुद्ध न्यायालय नहीं जाना चाहता। वृद्धाश्रम की उपयोगिता पाश्चात्य संस्कृति में स्वीकार्य हो सकती है। किन्तु इस देश की प्रकृति के अनुकूल नहीं है।

बुढ़ापे को आनन्दमय बनाने के लिए हमें अपनी सोच में परिवर्तन करना पड़ेगा। बुढ़ापा जीवन का उत्तरार्ध है। यह अगले जीवन की तैयारी का दिव्य अवसर है। अब तक हमने अपना जीवन संसार को दिया अब शेष जीवन को अपना परलोक सुधारने में लगा देना चाहिए। इसे रोग, शोक और दुःख का पर्याय मत मानिये। जवानी में जिन लोगों ने अपनी इन्द्रिय लालसाओं की अन्तहीन तृष्णा को शान्त करने के लिए जघन्य कर्म किए हों, सेवा काल में घूस–खोरी और बेइमानी में लिप्त रहें हों, उन्हें ही बुढ़ापा कष्ट देता है। आत्मसंतोष में सांस लीजिए। समस्त सांसारिक आर्कषणों से बचना चाहिए। जिह्वा पर पूर्ण नियन्त्रण रखें। 80 वर्ष पार करते ही भोजन केवल एक बार करें। रात्रि में दूध लें। पौष्टिक दवाओं में भस्म आदि न लें, अस्थियां निर्बल हो जाती हैं। हड्डियों में मज्जा सूख जाती है। हड्डियाँ सरन्ध्र हो जाती है। अतः कठिन व्यायाम छोड़ देना चाहिए। धार्मिक ग्रन्थों का यथासम्भव स्वाध्याय करें। किसी धार्मिक या सामाजिक संस्था से जुड़ें। यदि याददाश्त निर्बल हो रही हो तो चिकित्सक से परामर्श ले कर दवा लें। हलके योगसान और प्राणायाम करें।

मेरे जनपद आजमगढ़ में वरिष्ठ नागरिक सेवा संस्थान नामक एक संस्था है। वह पंजीकृत संस्था है। वह वृद्धजनों की सेवा करती है। ऐसी बहुत सी संस्थाएँ देश में हैं। आप भी ऐसी संस्थाओं के सदस्य बन जायें।

कोल बाज बहादुर, भैरवनाथ, जिला आजमगढ़ उ.प्र.–276001
चलभाष न. 9452088870

पागलपन बन सकता है वरदान

● डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा

पागलपन वरदान है या अभिशाप? यह एक विचारणीय प्रश्न है। क्या पागल होना, महापुरुषत्व की ओर बढ़ने का संकेत नहीं है? 'पागल' वे ही कहलाते हैं जो जीवन में कुछ कर गुजरना चाहते हैं। पहले 'पागल' शब्द पर विचार करते हैं। अतः 'पा' का अर्थ है– पाना और 'गल' का अर्थ है– बात या रहस्य अतः 'पागल' शब्द का समग्र अर्थ हुआ, जिसने जीवन के रहस्य को पा लिया हो।

प्रश्न यह है कि लोग पागल या पागलपन को बुरा क्यों समझते हैं। वे पागल व्यक्ति को उपेक्षा, घृणा और हास्यपूर्ण मुद्रा से क्यों देखते हैं? इसके उत्तर में कहा जा सकता है कि किसी पागल का पागलपन दो प्रकार का होता है– सामान्य पागलपन और अतिपागलपन। सामान्य पागलपन तो अच्छा है। इस अवस्था में मनुष्य समाज के लिए कुछ कर गुज़रना चाहता है। पागलपन प्रेम की चरम पराकाष्ठा है। ऐसे पागलपन के लिए मन में आस्था, प्रेम, सहानुभूति और करुणा के भाव जागृत होते हैं। हाँ, अति पागलपन ज़रूर हास्य, घृणा और द्वेष भाव को जन्म देता है। जैसे कपड़े फाड़ देना, अनावश्यक बड़बड़ाना, उल्टा–सीधा खाना, बेढंगी हरकतें करना आदि। इस प्रकार अतिपागलपन निस्संदेह त्याज्य है।

विचारणीय यह है कि क्या पागलपन मनुष्य के लिए वांछनीय है, क्या हमारे पूर्वजों ने इसे स्वीकार किया है? इसके उत्तर में 'हाँ' कहा जा सकता है। हमारे ऋषि–मुनियों ने किसी न किसी रूप से इस पागलपन की मस्ती को स्वीकार किया है। एक वेद मंत्र में **'उन्मादयत'** शब्द का प्रयोग किया गया है। इसका अभिप्राय यह है कि हे ईश्वर! मुझे अपने प्रेम में पागल बना दो। हमारे पूर्वजों ने जो कुछ भी महान कार्य किए, उनके लिए भले ही 'पागलपन' शब्द का प्रयोग नहीं किया जा सकता परन्तु भाव पागलपन का ही था। इस पागलपन के भाव और स्थिति से गुज़रने वाले व्यक्ति **'महर्षि'** कहलाए। उदाहरण के तौर पर प्राचीनकाल में जब एक व्यक्ति वैराग्यभाव से, सांसारिक सुखों का परित्याग करके, वन में जाकर कठिन साधना करता था, साधारण समाज के चिन्तन में वह उस व्यक्ति का पागलपन था, लेकिन उसका वही पागलपन तपस्या की अग्नि में तप कर, उसको ऋषियों की श्रेणी में समासीन कर देता था। क्या साधकों के लिए इस प्रकार का पागलपन आवश्यक नहीं है?

यदि प्राचीन वैदिक साहित्य और इतिहास का निरीक्षण करें तो सभी महापुरुषों और ऋषि–मुनियों में पूर्ण समर्पण, कर्त्तव्यनिष्ठा, कठोर साधना और तप–त्याग का जो पागलपन दृष्टिगत होता है वही उनकी महत्ता या श्रेष्ठता का कारण बनता है। यदि वैदिक साहित्य के अन्तर्गत कठोपनिषद् के नचिकेता पर विचार करें, अपने पिता वाजश्रवा के आदेश पर मृत्यु के दर्शन के लिए उसका प्रस्थान करना क्या पागलपन नहीं था? परन्तु यदि वह मृत्यु रूप यमाचार्य के दर्शनार्थ न जाता तो क्या जन्म–मृत्यु के रहस्य को समझ सकता था?

त्रेता युग में रामायण कथा के अन्तर्गत महाराजा दशरथ के आदेशानुसार रामचन्द्र जी का निरपराध या निर्दोष होने पर भी वन प्रस्थान के लिए तैयार होना, अग्नि में कूद जाने (**पतेयमपि पावके**) के लिए भी समुद्यत होना, राक्षसों के वध का संकल्प करना, आदि बातें जनसामान्य की दृष्टि में पागलपन भले ही हों पर यह भी सत्य है कि इसी महती भावना को अपना कर राम **'मर्यादा पुरुषोत्तम राम'** कहलाए। तुलसीदास जी के **'रामचरित मानस'** में राम विरह–विह्वल होकर पक्षियों और भ्रमरों से सीता का पता पूछते हैं– **'हे खग कुल मधुकर श्रेनी। तुम देखी सीता मृगनैनी।।'** संभवतः राम के द्वारा पक्षियों और भ्रमरों से सीता का पता पूछा जाना, राम का पागलपन कहा जा सकता है लेकिन इस पागलपन में क्या राम की सीता के प्रति अटूट प्रेमनिष्ठा प्रकट नहीं होती?

द्वापर युग में महाभारत के युद्ध में भगवान श्रीकृष्ण के द्वारा यह कहा जाना कि मैं अर्जुन का सारथि बनूँगा लेकिन शस्त्र–अस्त्र धारण नहीं करूँगा। सामान्य व्यक्ति इस बात को श्रीकृष्ण का अविवेकपूर्ण निर्णय या पागलपन कह सकता है क्योंकि कोई भी उन पर आक्रमण कर सकता था परन्तु इसी निर्णय के कारण वे कृष्ण से योगीराज कृष्ण बन गए।

आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानंद का बाल्यावस्था में यह संकल्प कि मैं सच्चे शिव की खोज करूँगा। क्या सच्चा शिव किसी चौराहे पर बैठा मिल जाएगा? जन सामान्य ने निश्चित ही उनके संकल्प को पागलपन की संज्ञा दी होगी लेकिन उनके इसी संकल्प के कारण मूलशंकर से महर्षि दयानंद बनने में सक्षम हुए। जब महात्मा गांधी ने देशवासियों को संदेश दिया कि हथियार उठाए बिना सत्याग्रह के द्वारा देश को स्वाधीन करना है, अंग्रेज़ों को भगाना है तो लोगों ने इसे महात्मा गांधी का पागलपन कहा, लेकिन बाद में जन साधारण इस पागलपन का अनुयायी बन गया।

किसी वस्तु, विचार या भावना का चरम उत्कर्ष पर पहुँच जाना ही पागलपन है। इसी पागलपन से साधक बनते हैं, वैज्ञानिक तैयार होते हैं तथा देशभक्त देश के लिए प्राणों की आहुति दे देते हैं। पागलपन से देश का निर्माण होता है तो अति पागलपन राष्ट्र के विध्वंस का कारण बन जाता है। मीठा फल स्वास्थ्य के लिए लाभदायी होता है तो ज्यादा पका फल सड़ जाता है। इसी प्रकार तप, त्याग, और समर्पण भाव से उपजा पागलपन राष्ट्र का निर्माण करता है तो अंहकार, ईर्ष्या, राग–द्वेष से उभरा अतिपागलपन देश को अवनति के गर्त मे ले जाता है किसी कवि ने ठीक ही कहा है–

मैं कहता हूँ, दुनियाँ पागल,
दुनियाँ कहती तू है पागल।
सब असंमजस में पड़े हुए हैं,
कौन बताए कौन है पागल।।

230, आर्य वानप्रस्थ आश्रम,
ज्वालापुर (हरिद्वार)

वैदिक धर्म की पाँच शिक्षाएँ

● खुशहाल चन्द्र आर्य

प्रश्न : वैदिक धर्म की ईश्वर–विषयक क्या शिक्षाएँ हैं?

उत्तर : वैदिक धर्म ईश्वर को सर्वव्यापक, सर्वज्ञ व सर्वशक्तिमान मानता है, उसी की पूजा व उपासना करनी बताता है और किसी की नहीं, यह वैदिक धर्म की मुख्य शिक्षा है। उस ईश्वर के बारे में वेद कहता है:–**य एक एव नमस्यो विश्वीडयः।** अथर्व, 2//1 अर्थात् एक ईश्वर ही पूजा के योग्य है।

प्रश्नः वेदों में तो अग्नि, मित्र, वरुण आदि बहुत–से देवों की पूजा का विधान पाया जाता है, ऐसा बहुत–से विद्वान् बताते हैं। क्या उनका विचार ठीक है?

उत्तर : नहीं! ऐसा विचार बिलकुल अशुद्ध है। वेदों में आए अग्नि, मित्र, ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि शब्द ईश्वर के ही वाचक हैं। ऋग्वेद में साफ बताया है:– **एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति।** ऋ. 1/174/46 उस एक परमेश्वर को विद्वान बहुत–से नामों से पुकारते हैं। जैसे एक ही मनुष्य को उसका भाई, भाई के नाम से, पिता, पुत्र के नाम से, पुत्र, पिता के नाम से, भतीजा, चाचा के नाम से और भांजा, मामा के नाम से पुकारता है, वैसे ही परमेश्वर के हज़ारों गुण होने के कारण विद्वान् लोग उसे हजारों नामों से पुकारते हैं।

प्रश्नः क्या वेदों में मूर्तियों की पूजा का विधान है?

उत्तर : नहीं! वेदों में एक, सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान् परमेश्वर की पूजा की आज्ञा है, जिसके विषय में बताया है कि वह निराकार है (**अकायम्, अव्रणम, अस्नाविरम्**:– यजु. 40/8) उसका किसी तरह का शरीर नहीं। जिसका शरीर होता है वह सर्वव्यापक और पूर्ण नहीं हो सकता। जब परमेश्वर का शरीर ही नहीं तो मूर्ति कैसे बन सकती है? इसलिए वेद में कहा है:–**न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः।** यजु. 32/3 अर्थात् जिस परमेश्वर की बड़ी महिमा है, उस सर्वव्यापक परमेश्वर की मूर्ति नहीं हो सकती।

प्रश्नः परमेश्वर निराकार है, तो भी धर्म की रक्षा और अधर्म के नाम के लिए वह अवतार धारण करता है, ऐसा बहुत–से लोग मानते हैं। क्या यह बात ठीक और वेदानुकूल है?

उत्तरः यह बात ठीक और वेदानुकूल नहीं है। जब परमेश्वर सर्वशक्तिमान है, ऐसा नहीं है कि वह शरीर धारण किए बिना धर्म की रक्षा और अधर्म का नाश नहीं कर सकता। ईश्वर न कभी पैदा होता है और न कभी मरता है, वह तो सदा एक जैसा ही रहता है। वेद में उसे **'अज'** नाम से पुकारा है, जिसका अर्थ है– कभी पैदा न होने वाला।

प्रश्नः ईश्वर की पूजा कहाँ और कैसे करनी चाहिए?

उत्तर : ईश्वर के निराकार होने से उसकी मूर्ति बनाकर आवाहन करना (घण्टी बजाकर बुलाना) फूल चढ़ाना, आरती करना, भोग लगाना, चन्दन लगाना आदि कार्य बिल्कुल व्यर्थ हैं। उसकी पूजा तो हृदय में ही हो सकती है, जहाँ आत्मा और परमात्मा दोनों ही हैं। साथ ही परमात्मा के बनाए सब प्राणियों के साथ प्रेम करना और खासकर अनाथों, गरीबों और दुखियों की हर तरह से सहायता करना– यही परमेश्वर की सच्ची पूजा है।

प्रश्नः वैदिक धर्म की दूसरी शिक्षा क्या है?

उत्तरः वैदिक धर्म की दूसरी शिक्षा है– सब मनुष्यों को भाई और परमात्मा को माता–पिता समझकर सबकी भलाई के लिए प्रेमपूर्वक यत्न करना। जन्म से ऊँच–नीच का अभिमान करना और किसी को भी अस्पृश्य व अछूत समझना वैदिक धर्म की शिक्षा के विरुद्ध है।

प्रश्नः वैदिक धर्म की तीसरी शिक्षा क्या है?

उत्तर : वैदिक धर्म की तीसरी शिक्षा कर्मों का नियम है, जिसका मतलब यह है कि हम जैसा काम करते हैं, वैसा ही हमें फल मिलता है। बुरे काम करने से हमें पछताना पड़ता है और उसके परिणाम दुःख, शोक, अशांति आदि देते हैं। अच्छे काम करने से हमें सुख, शान्ति, और आनन्द प्राप्त होता है। हमें यह बात याद रखनी चाहिए कि ईश्वर न्यायकारी है और दुनियाँ में झूठ और धोखा देर तक नहीं चल सकता। अन्त में उसकी पोल खुल जाती है। विजय तो ज़रूर सत्य की होती है। जैसा कि ऋषियों ने कहा है:– **सत्यमेव जयते नानृतम्। मुण्डकोपनिषद्।** सत्य की विजय होती है, झूठ की नहीं। इसलिए हमें कभी भी सत्य और न्याय के मार्ग को न छोड़ना चाहिए, चाहे ऐसा करने में कितना भी कष्ट उठाने पड़ें। न्यायकारी ईश्वर की दया से अन्त में हमें अवश्य ही अच्छा फल मिलेगा।

प्रश्नः क्या कर्मों का फल हमें इसी जन्म में मिल जाता है या दूसरे भी जन्म लेने पड़ते हैं?

उत्तर : सारे कर्मों का फल इसी जन्म में ही नहीं मिल जाता। उसके लिए कई जन्म लेने पड़ते हैं ताकि कई तरह के अनुभव प्राप्त हो सकें, जो एक जन्म में कभी सम्भव नहीं हो सकता।

प्रश्न : इस बात का क्या प्रमाण है कि कई जन्म होते हैं? हमें तो अपने और किसी भी जन्म का हाल याद नहीं।

उत्तर : केवल याद न रहने का यह मतलब नहीं कि पूर्वजन्म होता ही नहीं। यदि तुमसे यह पूछा जाए कि परसों तुमने क्या खाया था तो तुममें से बहुत को याद न होगा, पर क्या इसका मतलब है कि तुमने कुछ भी नहीं खाया था? अनेक जन्म होने के सैंकड़ों प्रमाण मिलते हैं।

प्रश्न : यदि कर्मफल का नियम ठीक हो तो तीर्थ स्थान व यात्रा से पाप नाश के विश्वास को कैसे ठीक माना जा सकता है?

उत्तरः जो लोग गंगा, यमुना, सरस्वती, कावेरी, गोदावरी आदि नदियों में स्नान करने अथवा हरिद्वार, द्वारिका जाते हैं, उनका यह विश्वास वेद और युक्ति के बिलकुल विरुद्ध है। वास्तव में किए हुए पापों का फल हमें अवश्य भोगना पड़ता है। उसे भोगे बिना हमारा किसी तरह भी छुटकारा नहीं हो सकता। सत्य, क्षमा, इन्द्रिय–निग्रह, दया, मन की पवित्रता, ब्रह्मचर्य, अहिंसा आदि ही सच्चे तीर्थ हैं, जिनकी सहायता से मनुष्य संसार रूपी समुद्र को पार कर सकता है जैसा कि महाभारत में कहा है–

सत्यं तीर्थ क्षमा तीर्थ, तीर्थमिन्द्रियनिग्रहः।
ब्रह्मचर्यं परं तीथंम, अहिंसा तीर्थमुच्यते।।
सर्वभूतदया तीर्थं, तीर्थमार्जवमेव च।
तीर्थानामुत्तमं तीर्थ विशुद्धिर्मनसः पुनः।।

यही श्लोक पद्मपुराण उत्तर खंड अ.237 में भी आए हैं।

अर्थात् सत्य तीर्थ है, क्षमा तीर्थ, इन्द्रियों को वश में रखना तीर्थ है, ब्रह्मचर्य बड़ा भारी तीर्थ है, अहिंसा तीर्थ है, सब प्राणियों पर दया करना तीर्थ है, सब से बड़ा तीर्थ तो मन को शुद्ध व पवित्र रखना है। इन सत्य, ब्रह्मचर्य, अहिंसा, चित्तशुद्धि आदि के बिना कभी किसी को मुक्ति व दुःख से छुटकारा प्राप्त नहीं हो सकता।

प्रश्नः वैदिक धर्म की चौथी शिक्षा क्या है?

उत्तरः वैदिक धर्म की चौथी शिक्षा है सम–विकास अर्थात अपने शरीर, मन, आत्मा आदि सब की शक्तियों को बढ़ाने का यत्न करना चाहिए। वैदिक धर्म इस बात पर ज़ोर देता है कि हमें अपनी सब शक्तियों को बढ़ाने की कोशिश करनी चाहिए। साथ ही वह इसके साधन बताता है। व्यायाम को ठीक तौर पर करने से शरीर की शक्ति बढ़ती है। अच्छी–अच्छी पुस्तकों के पढ़ने और विचार–मनन करने से मन की शक्ति बढ़ती है। श्री रामचन्द्र, श्री कृष्णचन्द्र, ऋषि दयानन्द सरस्वती जैसे महापुरुषों को हमें सम–विकास के लिए आदर्श रखना चाहिए।

प्रश्न : वैदिक धर्म की पाँचवीं शिक्षा क्या है?

उत्तर : वैदिक धर्म की पाँचवीं शिक्षा है– यज्ञ की भावना को पैदा करना और बढ़ाना। **'यज्ञ'** का अर्थ गरीब पशुओं को आग में डालना नहीं है– जैसा कि अज्ञान से कई लोग समझते हैं, बल्कि सेवा और स्वार्थ–त्याग के भाव को धारण करना है। वेदों में **"यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म"** कहकर यज्ञ को सब से अधिक श्रेष्ठ बताया गया है। इसलिए नित्य यज्ञ करना प्रत्येक मानव का पुनीत कर्त्तव्य है।

यहाँ यह बात समझने की है प्रत्येक मनुष्य अपने मल–मूत्र, पसीना, थूक आदि से कुछ वातावरण को नित्य गन्दा करता है। इसलिए नित्य यज्ञ करने से उतना वातावरण जो गन्दा हुआ था वह साफ व पवित्र हो जाता है, इसलिए प्रत्येक मनुष्य को अपने कर्त्तव्य भाव से नित्य यज्ञ करना चाहिए ताकि वातावरण शुद्ध बना रहे। इसलिए हमारे ऋषि–मुनियों ने पाँच महायज्ञों में देव यज्ञ करना भी एक महायज्ञ बताया है।

(वैदिक धर्म, आर्य समाज प्रश्नोत्तरी लघु पुस्तिका के आधार पर)

180–महात्मा गान्धी रोड़ (दो तल्ला),
कोलकाता–700007
फोन 22183825 (033)
मो. 8332025590, 9830135794

'वेदोक्त ज्योतिष एवं वेदार्थ' एक समीक्षा

● **शिवनारायण उपाध्याय**

स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती द्वारा रचित **'वेदोक्त ज्योतिष एवं वेदार्थ'** नामक ग्रन्थ पढ़ने का सुअवसर प्राप्त हुआ। स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती की वैदिक वाङ्मय पर गहरी पकड़ है। आपने अपने निर्णय के पक्ष में जहाँ केवल एक प्रमाण की आवश्यकता हो वहाँ भी वैदिक वाङ्मय से कई–कई प्रमाण प्रस्तुत कर अपनी विद्वत्ता का परिचय दिया है।

ग्रन्थ दो भागों में विभाजित है **'पूर्वार्द्धः'** और **'उत्तरार्द्धः'**। पहले भाग में वैदिक मान्यता के पक्ष में 24 समुल्लास हैं और दूसरे भाग में फलित ज्योतिष पर 18 समुल्लासों में उसके असत्य और अवैज्ञानिक होने के आक्षेप लगाए हैं। फलित ज्योतिषियों से अपने पक्ष को सिद्ध करने हेतु कुछ प्रश्नों का उत्तर देने को कहा गया है। जिनका उत्तर देना फलित ज्योतिषियों के लिए असंभव है।

पूर्वार्द्ध के **प्रथम समुल्लास** में बताया गया है कि मानव जीवन का परम उद्देश्य मोक्ष प्राप्ति है। मोक्ष प्राप्ति बिना ज्ञान के संभव नहीं है। ज्ञान का मूलाधार वेद हैं अतः वेदाध्ययन मोक्ष प्राप्ति का मुख्य साधन है।

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात्।

तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्थाविद्यतेऽयनाय।। यजु. 31.18

सूर्य के समान प्रकाश स्वरूप, प्रकृति अथवा अज्ञानान्धकार से दूर विद्यमान इस महान् पुरुष को जानें। उसको जानकर ही मृत्यु आदि दुःखों से बचा जा सकता है।

वैदिक परम्परा में ज्योतिष को वेद का चक्षुस्थानीय माना है।

फलित ज्योतिषी का कहना है कि ज्योतिष वह है जिससे भूत, वर्तमान और भविष्य की बातों को जान लेते हैं। जिसके द्वारा किसी कार्य की सफलता के लिए मुहूर्त बताया जाता है। पंचाङ्ग वही होता है जो वेद के प्रत्येक मंत्र के अर्थज्ञान में उपयोगी हो। मुहूर्त बतलाने वाले ग्रन्थ, भूत, वर्तमान और भविष्य की बातें बताने वाले ग्रन्थ अथवा काल को बताने वाले ग्रन्थ पंचाङ्ग नहीं हो सकते क्योंकि वेद मंत्रों के अर्थ जानने में उनका उपयोग नहीं हो सकता है। वास्तव में ज्योतियों को आधार बनाकर रचा हुआ ग्रन्थ ज्योतिष कहलाता है। ज्योतिष शास्त्र जगत् एवं जगत्कर्ता परमात्मा का बोध कराता हुआ वेदार्थ बोध कराने से पंचाङ्ग है।

दूसरे समुल्लास में बताया गया है कि ज्योतिष का अध्ययन क्यों करें? ज्योतिष अध्ययन करने के प्रयोजन हैं–**ब्रह्मप्राप्ति– ज्योतिषां बाधते तमः।** ऋ. 5.8.2.5 **सृष्टि विज्ञान–** कल्पनातीत सृष्टि का ज्ञान इसी शास्त्र से होता है। **नास्तिक्य निवारण–** इस अचिंत्य, अप्रमेय, अनादि अनन्त विश्व का ज्ञान होने पर मानव की नास्तिकता दूर हो जाती है। **तत्वज्ञान–** वेद के अनुसार पिण्ड का अधिपति आत्मा है और ब्रह्माण्ड का अधिपति परमात्मा है। शेष प्रकृति है। सृष्टि का उपादान प्रकृति है। ज्योतिष के अध्ययन से यह तत्व ज्ञान हो जाता है। तत्वज्ञान मुक्ति में सहायक होता है। **अघमर्षण–** जीवन में अघमर्षण करने अर्थात् निष्पाप होने के लिए ज्योतिष का अध्ययन करना चाहिए। **वेदार्थ ज्ञान–** वेद का ज्ञान ज्योतिष के ज्ञान से ही संभव है। और **आगम–** आप्त प्रमाणों का अनुसरण करके भी ज्योतिष का अध्ययन करना चाहिए।

तीसरे समुल्लास में ज्योतिष के अनध्ययन से होने वाले अनर्थों पर विचार किया गया है। यथा **वेदों के साथ अनर्थ–** वेदों को ठीक से जानने के लिए ज्योतिष का गहन ज्ञान आवश्यक है। इसके अभाव में यदि वेद पर कुछ लिखेंगे तो अनर्थ किए बिना नहीं रह सकते। **अन्धविश्वास–** जैसे मकर संक्रान्ति के विषय में। **मोक्ष का कारण–** फलित ज्योतिष के अनुसार उत्तरायण में मृत्यु होने पर जीवात्मा मुक्ति प्राप्त कर लेता है जो निरा अज्ञान है। **अद्वैतवाद की असत्यता–** अद्वैतवाद वेदादि सत्यशास्त्रों के विरुद्ध है ज्योतिष इसे बताता है। **सृष्टि की उत्पत्ति** का वास्तविक ज्ञान प्राप्त कराने में भी ज्योतिष सहायक है। पुराणों में इस विषय में वेद विरुद्ध वर्णन हुआ है। **सृष्टि काल–** वैदिक परम्परा के अनुसार सृष्टि को उत्पन्न हुए लगभग 2 अरब वर्ष हुए हैं जबकि इसाई सृष्टि की उत्पत्ति ईसा पूर्व 4004 वर्ष मानते हैं जो विज्ञान की मान्यता के भी विरुद्ध है। **विश्व का स्वरूप कल्पित–** वेद विद्या शून्य लोगों ने मध्यकाल में अगोचर पदार्थों के विषय में मनमानी कल्पना की है। पृथ्वी के स्थिर और चपटी मानना भी अज्ञान है। इसके आयतन के विषय में भी जो कुछ कहा है वह अज्ञान जनित ही है। पृथ्वी घूमती है इसे न मानना भी केवल पक्षपात ही है। वर्तमान में वैज्ञानिकों ने उपग्रहों में बैठकर पृथ्वी को घूमते हुए देख लिया है। फलित ज्योतिषी गुरुत्वाकर्षण के विषय में कुछ नहीं जानते हैं। इसी प्रकार अन्य कई मान्यताएं हैं जो ज्योतिष के न जानने से बनी हैं।

चौथे समुल्लास में जगत् की उत्पत्ति स्थिति और प्रलय पर विचार किया गया है। प्रकृति, जीव और परमात्मा को अनादि माना गया है और तर्क पूर्ण प्रमाणों से सिद्ध भी किया गया है।

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।

तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति।। ऋ. 1.164.20

यह मंत्र त्रैतवाद को सिद्ध कर रहा है।

फिर पञ्चभूतों से बने लोक– लोकान्तरों के छः विभाग हैं– नक्षत्र, ग्रह, उपग्रह, धूमकेतु, उल्का और नक्षत्रि! नक्षत्र असंख्य हैं। नक्षत्र का अर्थ सूर्य है।

पाँचवें समुल्लास में **ग्रह, उपग्रह, धूमकेतू–** पुच्छल धुएँ के समान अति दीर्घ पुच्छ से युक्त होकर सूर्य के चारों ओर भ्रमण करने वाले लोकों को धूमकेतू कहते हैं। **उल्काएँ–** रात्रि में अत्यन्त तीव्रता से प्रकाशित होकर वेग से आकर भूमि पर गिरने वाले पदार्थों को उल्का कहते हैं।

छठा समुल्लास– इसमें ग्रहों की संख्या और नक्षत्रों में चर्चा है। वेद में वर्णन है कि सृष्टि में लाखों निहारिका मण्डल, नक्षत्र, ग्रह, उपग्रह, उल्काएँ आदि हैं और सभी चलायमान हैं। ध्रुवतारा भी स्थिर नहीं है वह भी चलायमान है। वास्तव में आकाश में कोई भी आकाशीय पिण्ड न तो स्थिर है और न स्थिर रह ही सकता है।

सातवाँ समुल्लास– इस सम्मुलास में बताया गया है कि आकाश में स्थित सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी, द्युलोक, सम्पूर्ण सौर मण्डल गोलाकार हैं। इतना ही नहीं वरन् सम्पूर्ण विश्व, आकाश, पृथ्वी का भ्रमण मार्ग, समस्त लोक–लोकान्तरों की कक्षाएँ सत्व, रज, तम कण, परमाणु आदि सभी गोल हैं। यह सम्पूर्ण वर्णन विज्ञान के अनुकूल है। **आठवाँ समुल्लास–** इसमें भी यही बताया गया है कि नत्रादि के भ्रमण कक्ष भी गोल हैं। **नवम् समुल्लास–** इसमें बताया गया है कि सूर्य सौर मण्डल के केन्द्र में होता है। **दसवाँ समुल्लास–** इसमें आकर्षण, अनुकर्षण पर विचार किया गया है। यह जगत् ईश्वर, जीव और प्रकृति का समूह है। ईश्वर और जीव चेतन हैं, प्रकृति जड़ है। ईश्वर जीव में कारण प्रकृति में और कार्य जगत् में बाहर, भीतर सर्वत्र व्याप्त है। वह जगत् के बाहर भी है। ईश्वर जीव और जगत् को धारण करता है। ये दोनों ईश्वर द्वारा धारित उसी में रहते हैं। ईश्वर इनका आकर्षण करता है। जीव एवं प्रकृति में भी आकर्षण है। यजुर्वेद अध्याय 34 मंत्र संख्या 31 में कहा गया है–

आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च।

हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्।।

अर्थ– परमात्मा सब लोगों के साथ आकर्षण गुण रहित वर्तमान है। अनन्त बल से, आनन्द पूर्वक क्रीड़ा एवं व्यवहार का साधनज्ञान से, सत्य विज्ञान को, ज्ञानियों को, मोक्ष को मनुष्यों को प्राप्त कराता हुआ, परमेश्वर सब लोकों को धारण करता है, सब लोकों को प्रकाशित कर सबको जानता है।

ग्यारहवाँ समुल्लास– इसमें प्रकाश्य प्रकाशक विषय पर विचार किया गया है। वेदों के अनुसार इस जगत् में दो प्रकार के लोक हैं। (1) स्वतः ज्योति और परतः ज्योति अर्थात् स्वयं प्रकाशक तथा अन्यों के प्रकाश से प्रकाशित। **बारहवाँ समुल्लास–** इसमें विविध मान यथा कालमान, क्षेत्रमान, दूरमान और भार मान का वर्णन है। इसी समुल्लास में यह भी सिद्ध किया गया है कि वर्तमान में सृष्टि को उत्पन्न हुए कितना समय व्यतीत हुआ हैं। वैदिक वाङ्मय में सृष्टि की कुल आयु 4 अरब 32 करोड़ वर्ष मानी गई है। **तेरहवें समुल्लास** में क्षेत्र विज्ञान, **चौदहवें समुल्लास** में काल विज्ञान, **पन्द्रहवें समुल्लास** में व्यक्त काल की प्रवृत्ति तथा सात वारों पर विचार किया गया है। लेखक के अनुसार वैदिक वाङ्मय में वारों का नाम नहीं आया है, जो सत्य है। **सोहलवें समुल्लास** में वर्ष किस दिन से प्रारम्भ होना चाहिए? इस विषय पर विचार कर बताया गया है कि संवत्सर का प्रारम्भ वसन्त ऋतु में आने वाला विषुव दिन है जिस दिन सूर्य भूमध्य रेखा पर आता है वही दिन संवत्सर का प्रथम दिन होता है। सुविधा के लिए इसे चैत्र शुक्ल की प्रतिपदा माना जाता है। इसी विषय पर **सत्रहवें समुल्लास** में भी विचार किया गया है।

हमारे देश में पूर्व में उज्जैन में सूर्योदय से नया दिन प्रारम्भ होता रहा है। हमारी अकर्मण्यता से आजकल ग्रीनविच को नवीन दिन का प्रारम्भ माना जाता है **अट्ठारहवें समुल्लास** में इसी पर विचार किया गया है। **उन्नीसवें समुल्लास** में मास का प्रारम्भ कब हो? इस पर विचार कर निर्णय लिया गया है कि शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से मास का प्रारम्भ होता है। **बीसवें समुल्लास** में छः ऋतुओं के विषय में चर्चा कर शतपथ ब्राह्मण 2.1.3.1 में **बसन्तो गीष्मो वर्षाः ते देवता ऋतवः। शरद्धमन्तशिशिरास्ते पितरः** को मान्यता देकर बसन्त ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमन्त और शिशिर कुल छः ऋतुएँ होती हैं। **21वें समुल्लास** में ऋतुएँ सूर्य के द्वारा बनती हैं यह बताया गया है। **बाईसवें समुल्लास** में पुनः जगत् की अवस्था पर विचार हुआ है। **23वें और 24वें समुल्लासों** में प्रलय के विषय में बताया गया है जो सब वैदिक वाङ्मय के अनुसार है।

लेखक ने ज्योतिष विषय को अपने सम्पूर्ण अंगों सहित बताने में पूर्ण सफलता प्राप्त की है। कोई भी फलित ज्योतिषी इस विवरण पर अंगुली नहीं उठा सकता है। अगले 14 समुल्लासों में विद्वान् लेखक ने फलित ज्योतिष के विभिन्न अंगों पर गम्भीरता पूर्वक विचार कर कुछ आक्षेप किए हैं जिनका उन्हें उत्तर देना है। अन्तिम समुल्लास में स्वामी दयानन्द की एतत् विषयक मान्यता दी गई है जो पढ़ने योग्य है।

सम्पूर्ण पुस्तक वैदिक मान्यता के समर्थन में लिखी गई है। पुस्तक पठन योग्य ही नहीं वरन् हर परिवार में रखने योग्य है। लेखक स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती वैदिक वाङ्मय के जाने–माने विद्वान हैं। उन्होंने इस पुस्तक की रचना में वेदों, ब्राह्मण ग्रन्थों, मनु स्मृति आदि के प्रमाणों की झड़ी लगा दी है। एक के स्थान पर दसियों प्रमाण देकर वैदिक मान्यता की सिद्धि की है। पुस्तक की रचना में किया गया उनका कठोर श्रम स्तुत्य है। मैं उनके स्वस्थ, सुखी दीर्घ जीवन की कामना करता हूँ। इतिशम्।

73 शास्त्री नगर दादाबाड़ी, कोटा। (राज.)

पत्र/कविता

रुकने का नाम नहीं ले रही अंधविश्वास की घटनायें

कुछ दिन पहले राजस्थान पत्रिका में कोटा के एमबीएस अस्पताल से आत्मा ले जाने का समाचार प्रकाशित हुआ। समाचार के अनुसार एमबीएस हॉस्पीटल में बून्दी के डाबरा गांव से आये लोगों द्वारा इमरजेंसी वार्ड में आत्मा ले जाने के नाम पर टोटका एवं तंत्रक्रियाएें की गईं। जिसे वहां मौजूद स्टॉफ कर्मियों एवं सुरक्षा कर्मियों द्वारा रोकने का प्रयास नहीं किया गया। इससे लोगों में भय व्याप्त हो गया।

यह राज्य सरकार के अंधविश्वास रोक अधिनियम का खुला उल्लघंन है। बिना स्थानीय कर्मियों की संलिप्तता के ऐसा होना नामुमकिन है। कोटा के अस्पतालों में ऐसी घटनाएँ रुकने का नाम नहीं ले रही है। हॉस्पीटल, आई.सी.यू. एवं इमरजेंसी वार्ड में इस प्रकार का आचरण वहाँ भर्ती रोगियों के लिए प्राण घातक हो सकता है।

आर्य समाज की स्थापना अंधविश्वास, पाखण्ड तथा सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध लोगों में जागरूकता लाने के लिए हुई थी। यह वर्ष आर्य समाज द्वारा देशभर में अंधविश्वास निराकरण वर्ष के रूप में मनाया जा रहा है। जीवात्मा को ले जाने जैसी क्रिया का कोई शास्त्रीय एवं वैज्ञानिक आधार नहीं है। यह सिर्फ पाखण्ड एवं अंधविश्वास है तथा आस्था के नाम पर लूट–खसूट एवं अत्याचार है।

कैलाश बाहेती
मंत्री, आर्य समाज, विज्ञाननगर
कोटा (राज.)–324005

****

आदत पिंजरे की तरह, तोड़ो उसका जाल

हिंसा अर प्रतिकार से, जीत सके न कोय।
क्षमा पश्चाताप से, खत्म दुश्मनी होय।।

हिंसा की प्रतिहिंसा तो, आग और भड़काय।
पर क्षमा पश्चाताप, जल से आग बुझाय।।

जिसे पश्चाताप नहीं, न कोई अहसास।
नहीं क्षमा का अधिकार, जिसे नहीं आभास।।

आदत रस्सी की तरह, बट ही पड़ता जाय।
समय संग मजबूत हो, कभी छूट ना पाय।।

विष की तो इक बूंद से, जल गंदा हो जाय।
आदत बुरी गर एक हो, मानव को लुढ़काय।।

गंदी आदत तो सभी, असुरों का परिवार।
एक के पीछे एक सभी, आने को तैयार।।

नीम कड़वी रहे सदा, चाहे गुड़ संग खाय।
नीच सज्जनों में रहे, आदत छोड़ न पाय।।

बिना विचारे काम करे, जैसी आदत होय।
आदत से मजबूद हो, विचार करे न कोय।।

आदत बेड़ी पांव में, कर देती मजबूर।
सोच विचार किए बिना रहे अक्ल से दूर।।

अवगुण को तू छोड़ दे, आदत ऐसी डाल।
आदत पिंजरे की तरह, तोड़ो उसका जाल।।

नरेन्द्र आहूजा "विवेक"
502 जीएच 27 सै. 20 पंचकूला हरियाणा
मो. 09467608686

लेख ऋषि के भाष्य अनुसार नहीं है

'आर्य जगत्' वर्ष 59 अंक 13 दिनांक 01 अप्रैल, अंक में श्रीयुत हरिकृष्ण निगम जी के लेख 'आर्य–द्रविड़ विभाजन के भ्रम का निवारण', पढ़ा। लेख पढ़ कर कुछ प्रश्न उत्पन्न होते हैं। मालूम पड़ता कि लेख के कुछ बिन्दु महर्षि दयानन्द सरस्वती के भाष्य के अनुसार नहीं है। वेदों में नदियों तथा प्रदेशों के नाम नही हैं। वहाँ ज्ञान, विज्ञान, उपासना तथा कर्म के अतिरिक्त कुछ नहीं है। वेदों में एक पिता परमेश्वर को छोड़कर किसी अन्य की उपासना वर्जित है। फिर कैसे सरस्वती नदी की उपासना वेदों में एक नहीं नब्बे बार की गई? ऋग्वेद में कहीं भी 'आर्यावर्त, सप्त–सिन्धु तथा 'पूर्व में सरस्वती तथा पश्चिम में सिंधु' का यशोगान नहीं है। श्री निगम जी इस विषय में प्रकाश डालें तो हम आभारी होंगे। आवश्यकता है कि ऋषि द्वारा किए गए अर्थों को सही रूप में समझा और माना जाए तथा वैसे ही प्रचारित किया जाए।

ओमप्रकाश यादव
अध्यक्ष, आर्य समाज, गोवा

****

यह तो देशद्रोही कृत्य ही है

राजस्थान की अंग्रेज़ी माध्यम की कक्षा आठवीं के समाजशास्त्र विषय की संदर्भ पुस्तक में लोकमान्य तिलक का **'आतंकवाद के जन'** कहकर अनादरकारी उल्लेख किया गया है। इसकी कठोर शब्दों में निंदा की जानी चाहिए। भारत की स्वतंत्रता के लिए अपना सर्वस्व बलिदान करने वाले लोकमान्य तिलक का अनादर करना असभ्यता है।

राजस्थान शासन इस प्रकरण पर गंभीरता से ध्यान दे और पुस्तक से आक्षेपजनक उल्लेख तत्काल हटाए। यह चूक अनायास नहीं हुई है, राष्ट्रपुरुषों का अनादर करने के लिए, जानबूझकर लोकमान्य तिलक का इस प्रकार उल्लेख किया गया है। ऐसा उल्लेख करनेवाले लेखक, छापनेवाले मुद्रक, प्रकाशक एवं संबंधित दोषी शासकीय अधिकारियों पर भी कठोर कानूनी कार्रवाई की जाए, संबंधित पुस्तक तत्काल वापस ली जाए और संबंधित व्यक्ति इस विषय में सार्वजनिक रूप से क्षमायाचना करें।

स्वतंत्रता से पूर्व तत्कालीन जनता स्वतंत्रता संग्राम में सहभागी हो, इसके लिए लोकमान्य तिलक ने अपनी ओजस्वी वाणी से भारतीय जनता में स्वतंत्रता की चिंगारी उत्पन्न की। जनता स्वतंत्रता संग्राम में उतरी, इसलिए अंग्रेज़ों ने तिलक को **'फादर ऑफ इंडियन अनरेस्ट'** अर्थात् **'भारतीय असंतोष के जनक'** का विशेषण दिया। ऐसा होते हुए भी तिलक को **'आतंकवाद के जनक'** (**फादर ऑफ टेररिज़म**) कहना, देशद्रोही कृत्य ही है।

श्री रमेश शिंदे
मो. 9987966666

****

आर्य समाज स्थापना की 143वीं वर्ष गाँठ पर ज़रा सोचें

महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज की स्थापना 143 वर्ष पूर्व मुम्बई में की थी। आज भी मुम्बई की जनता में आर्य समाज का प्रभाव बहुत कम है। आर्य समाज की स्थापना पाखण्ड, अंधविश्वास, जादू–टोना, भूत–प्रेत, तांत्रिकों पर विश्वास, मूर्ति–पूजा, कब्र पूजा, दरगाह पर चादर चढ़ाना, सती–प्रथा, बाल–विवाह, विधवा को पुर्नविवाह से रोकना, महिलाओं को वेद न पढ़ने देना और उन्हें शिक्षित न होने देना, दहेज प्रथा, तलाक आदि कुरीतियों और सामाजिक बुराईयों को बंद करने और संध्या हवन, वेद–प्रचार करने के लिए की गई थी।

आर्य जन सत्यार्थप्रकाश तो पढ़ते थे और पढ़ते हैं किंतु उस पर अमल नहीं करते हैं यदि करते तो राजनीतिक क्षेत्र में राजार्य सभा बन गई होती। अनेक साप्ताहिक, पाक्षिक अथवा मासिक पत्र–पत्रिकायें छप रही हैं लेकिन कहीं भी वास्तिक हवन नहीं छापा जाता।

ईश्वर का सर्व श्रेष्ठ नाम ओ३म् है। सब वादों में त्रैतवाद सर्वोत्तम है। **'कुण्वन्तो विश्वमार्यम्'** अभिवादन में नमस्ते कहना सर्वोत्तम है। गायत्री मंत्र वेदों का सार है, चारों वेदों में 20416 मंत्र है। वेद का अर्थ है–ईश्वरीय ज्ञान है यह अत्यंत कम छपता होगा।

पतंजलि योगपीठ हरिद्वार के संस्थापक स्वामी रामदेव प्रशंसनीय कार्य कर रहे हैं। उनसे अनुरोध है कि किये जा रहे अन्य प्रशंसनीय कार्यों के साथ–साथ हिन्दुओं के घट रहे प्रतिशत पर भी ध्यान दें।

इन्द्र देव, पूर्व प्रधान, नगर आर्य समाज,
बुलन्दशहर, मो. 8958778443

****

आर्य कन्या गुरुकुल शिवगंज का 20वाँ महोत्सव सोल्लास सम्पन्न

आर्य कन्या गुरुकुल शिवगंज का 20वाँ वार्षिकोत्सव एवं तृतीय दीक्षान्त समारोह बड़े ही धूमधाम व हर्षोल्लास पूर्व सम्पन्न हुआ। समारोह में तीनों दिन प्रातः ब्रह्मयज्ञ एवं अग्निहोत्र यज्ञ हुए। विशेष आहुतियाँ अथर्ववेद के मंत्रों से दी गईं। इसी प्रकार सायंकाल दोनों यज्ञ किय गये। यज्ञ की ब्रह्मा आचार्या डॉ. सूर्यादेवी चतुर्वेदा थीं।

समारोह में विशेष अतिथि श्री स्वामी सुमेधानन्द जी सरस्वती सांसद पिपरोली, राज श्री स्वामी आर्येशानन्द जी सरस्वती पिण्डवाडा, श्री ओममुनि जी ब्यावर, श्रीमती ज्योत्स्ना धर्मवीर अजमेर, श्री डॉ. सोमदेव शास्त्री, डॉ. सुदक्षिणा शास्त्री मुम्बई, पं. अशोक आर्य ग्वालियर, श्री रघुमन्ना हैदरावाद तथा आर्य जगत के प्रसिद्ध विद्वान् उपदेशक, भजनोपदेशक पधारे। सभी विद्वानों ने गुरुकुल की गतिविधियाँ देखकर भूरि–भूरि प्रशंसा की।

ब्रह्मचारिणियों ने प्रथम दिवस बौद्धिक कार्यक्रम प्रस्तुत किये। द्वितीय दिवस सायम् शौर्यपूण शस्त्र संचालन, लाठी आदि के कार्यक्रम किये गये। गुरुकुलीय ब्रह्मचारिणियों के मन्त्रगायन, तुलनात्मक ऋषि जीवनी, स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश सिद्धात पण्डित सभा प्रतियोगिता, छन्दमयी संस्कृत वार्ता, गीत, वेदपाठ आदि जहाँ बौद्धिक कार्यक्रम आकर्षण के केन्द्र रहे, वहीं शौर्यपूर्ण शस्त्रसंचालन, मार्शल आर्ट आदि की भी अति धूम हुई। तृतीय दिवस दीक्षान्त समारोह हुआ। जिसके अध्यक्ष श्री स्वामी सुमेधानन्द सरस्वती थे। ब्रह्मचारिणियों को गुरुकुल की आर्षविद्यामणि विशिष्ट उपाधि दी गई।

नव स्नातिकाओं को अनुशासनोपदेश एवं दीक्षान्त भाषण गुरुकुल की आचार्या डॉ. सूर्यादेवी चतुर्वेदा ने किया। अनुभाषण आचार्या धारणा याज्ञिकी का हुआ। इस अवसर पर स्वामी सुमेधानन्द सरस्वती ने कहा आर्य कन्या गुरुकुल शीर्षस्थ स्थान पर है। यहाँ से पढ़ी हुई स्नातिकायें वैदुष्य से परिपूर्ण हैं। यह सब आचार्या बहन सूर्यादेवी एवं बहन धारणा के तप, त्याग व साधना का प्रतिफल है। नव स्नातिकओं ने आत्मनिवेदन करते हुए आर्यसमाज, वेदप्रचार की समृद्धि का संकल्प लिया। तीन स्नातिकाओं ने गुरुकुल चलाने की उद्घोषणा की।

आर्य समाज अलवर में 100वाँ निःशुल्क चिकित्सा जाँच शिविर

आर्य समाज के वरिष्ठ एवं कर्मठ नेता स्वर्गीय पं. हेतराम आर्य का स्मृति दिवस आर्य समाज, स्वामी दयानन्द मार्ग, अलवर में बड़ी धूमधाम से मनाया गया।

इस अवसर पर निःशुल्क एलोपैथिक, आयुर्वैदिक, होम्योपैथिक, एक्यूप्रेशर एवं हर्बल चिकित्सा पद्धतियों पर आधारित 100वाँ निशुःल्क चिकित्सा एवं स्वास्थ्य जाँच शिविर लगाया गया।

शिविर का प्रारंभ प्रातः यज्ञ से हुआ। शिविर में मुख्य अतिथि समाज सेवी श्री सतीश शर्मा, सीक्योरेटी अधिकारी, आल

इण्डिया मेडीकल इन्स्टीट्यूट, देहली रहे। मुख्य अतिथि ने पूरा समय देकर शिविर का जायजा लिया और प्रशंसा की।

इस शिविर का मुख्य आकर्षण हर्बल बॉडी चैक–अप रहा जिसमें BMF, FAT%, UFA, BODY AGE, Weight, RM आदि किये गये। हैल्थ एडवाइजर श्रीमती मीनाक्षी शर्मा ने लगभग 150 व्यक्तियों को निःशुल्क सेवाएं दीं।

शिविर में हिमाग्लोबिन, यूरिन कम्पलीट, थायराइड, पी.एस.ए. लिपिडप्रोफाइल, एच.बी.ए.1सी, लीवर फंक्शन, किडनी फंक्शन, ई.सी.जी. इको, एक्स–रे डिजिटल, टी.एच.एस., विटामिन बी 12, की जाँच क्योरवैल डायग्नोस्टिक सैंटर द्वारा विशेष रियायती दरों पर की गई।

कोलकाता में आर्य पुरोहित प्रशिक्षण शिविर सम्पन्न

पश्चिम बंगाल के ग्रामीण क्षेत्रों में आर्य समाज का अधिक से अधिक प्रचार–प्रसार हो एवं महर्षि दयानन्द सरस्वती के विचारों को जन जन तक पँहुचाने के लिये 2000 से आर्य समाज कलकत्ता के सहयोग से आर्य पुरोहित प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया जाता है। ओम प्रकाश विद्यावाचस्पति द्वारा शुरू की गई इस परम्परा को उनकी सुयोग्य पुत्री पण्डिता अर्चना शास्त्री ने इसे निरन्तर बढ़ाया है।

इस वर्ष शिविर आर्य प्रतिनिधि सभा, बंगाल एवं आर्य समाज कोलकात्ता के संयुक्त तत्वावधान में आर्य समाज कोलकाता में लगाया गया। शिविर का उद्घाटन आर्य समाज के प्रसिद्ध लेखक, कवि तथा ऋषि के अनन्य भक्त श्री खुशहाल चन्द्र आर्य ने दीप प्रज्ज्वलित कर किया। शिविर में बंगाल के विभिन्न आर्य समाजों से शिविरार्थियों ने भाग लिया। शिविर में सोलह संस्कारों एवं वेद मन्त्रों के शुद्ध उच्चारण का अभ्यास कराया गया। समापन समारोह में शिविरार्थियों ने अपने अपने अनुभव बताए एवं 'अन्धविनूवास का परिणाम' नामक नाटक के द्वारा लोगों का मन मोह लिया।

शिविर में शिविरार्थियों को प्रशिक्षण देने में पं श्री वेद प्रकाश शास्त्री, पं श्री सतीश चन्द्र आर्य, पं श्री मधुसूदन शास्त्री, पं श्री अपूर्व देव शर्मा, पं श्री वेदभानु, पं श्री काशीनाथ आर्य, पण्डिता अर्चना शास्त्री ने अपना पूर्ण सहयोग दिया।

Registration No. R.N.I. 39\57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11\6066\2018-20
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103\2018-20
Posted at N.D.P.S.O. ON 04\05-07-2018

डी.ए.वी. स्कूल समाना में मनाया गया योग दिवस

डी.ए.वी. स्कूल समाना में तीन पंजाब एयर स्क्वार्डन एन.सी.सी. पटियाला (एयर विंग) के दिशा–निर्देश एवं आर्य युवा समाज के बैनर तले चौथा अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस मनाया गया जिसमें एन.सी.सी. केडेट्स ने भाग लिया। एन.सी.सी. अफसर रामफल मैहला द्वारा केडेट्स को योग करवाया गया। योग के जीवन में महत्व एवं योग से तन और मन को किस प्रकार तन्दुरुस्त बनाया जा सकता है इस बारे में जानकारी दी गयी। अंत में केडेट्स को जलपान करवा कर कार्यक्रम का समापन किया गया।

प्राचार्य डॉ. मोहन लाल ने सभी प्रतिभागियों सहित आयोजकों तथा प्रशिक्षकों का आभार व्यक्त किया।

डी.ए.वी. अम्बोटा में लगा वैदिक चेतना शिविर

डी.ए.वी. स्कूल अम्बोटा में तीन दिन तक ''वैदिक चेतना शिविर'' का आयोजन किया गया, जिसमें विद्यालय के 500 छात्रों ने भाग लिया। शिविर का शुभारंभ गायत्री मंत्र व दीप प्रज्ज्वलन से किया गया। विद्यालय के नवनिर्मित प्रशासनिक भवन का उद्घाटन मुख्य अतिथि, विद्यालय के चेयरमैन श्री अरविंद घई (सचिव, डी.ए.वी. कॉलेज प्रबंधक समिति, नई दिल्ली) के कर कमलों द्वारा किया गया। इस शिविर का संचालन श्री राम निवास गुणग्राहक, श्रीगंगानगर, भजन गायक श्री देव मुनि, मथुरा द्वारा किया गया।

शिविर का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों को वैदिक संस्कृति से परिचित करवाना और उन्हें संस्कारी बनाना था। शिविर में विद्यार्थियों को वैदिक यज्ञ की विधि और महत्त्व से परिचित करवाया गया तथा उनके मन की जिज्ञासा को शांत किया। श्रीमती रश्मि घई ने अपने सुरीले कंठ द्वारा भजनों का ऐसा समां बाँधा कि वहाँ उपस्थित सभी मंत्रमुग्ध हो गये।

विद्यालय के वाईस चेयरमैन श्री के.सी. कतना, एल.एम.सी. मेम्बर कर्नल जी.एस. जसवाल, नम्बरदार श्री मुरारी लाल, डॉक्टर विक्रमादित्य गौतम प्रधान आर्य समाज अम्ब, श्रीमती रेखा गौतम, श्री मुनीश आर्य, श्री संजीव ठाकुर, श्री मोहिंदर सिंह, श्री तिलक राम शास्त्री सहित गणमान्य व्यक्तियों ने यज्ञ में आहुतियाँ डालीं।

दूसरे दिन शिविर के संचालक राम निवास गुणग्राहक ने बच्चों को वेदों और उनके महत्व व जीवन निर्माण सम्बन्धी ज्ञान प्रदान किया और बच्चों को सन्मार्ग पर चलने हेतु दिशा–निर्देश प्रदान किये।

शिविर के तीसरे दिन विद्यालय के चेयरमैन अरविंद घई ने बच्चों को वैदिक संस्कृति से जुड़े रहने के लिए प्रेरित किया। विद्यालय के वाईस चेयरमैन के.सी. कतना ने हवन के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि हवन करने से वातावरण के शुद्धता के साथ–साथ सकारात्मक ऊर्जा का भी प्रवाह होता है। उन्होंने बच्चों को अपने अवकाश के दौरान एक–एक पौधा लगाने के लिए प्रेरित किया।

प्रधानाचार्य श्री नमित शर्मा ने आए हुए आंगतुकों का धन्यवाद किया और उनके उद्देश्य और उपयोगिता पर प्रकाश डाला।

आर्य समाज विज्ञान नगर में कराई गईं यौगिक क्रियाएं

डॉ. जयदीप आर्य ने आर्य समाज विज्ञान नगर में योग शिक्षक राकेश चड्ढा द्वारा संचालित योग शिविर में यौगिक क्रियाएं तथा आसन, प्राणायाम का अभ्यास करवाया। शिविर में डॉ. जयदीप आर्य ने कहा कि योग समय पूर्व बुढ़ापे से बचाता है, शरीर में ऊर्जा का संचार करता है। आज के युग में जोड़ों के दर्द, मांसपेशियों के दर्द ने व्यक्ति को समय पूर्व ही बुढ़ापे की ओर ढकेल दिया है। योग के माध्यम से इससे बचा जा सकता है।

इस अवसर पर उन्होंने योगिक सूक्ष्म क्रियाओं का अभ्यास करवाया तथा एक्यूप्रेशर बिंदूओं के बारे में भी विस्तृत जानकारी दी।

शिविर में पतंजलि से पधारे आचार्य चंदन ने साधकों को कपालभाति, अनुलोम–विलोम, भस्त्रिका व प्रणव प्राणायाम का अभ्यास कराया। इस अवसर पर डॉ. जयदीप आर्य ने साधकों के साथ आध्यात्मिक वातावरण का निर्माण करते हुए ''हिम्मत न हारिये, न प्रभु नाम बिसारिये, हंसते–मुस्कराते हुए जिंदगी गुजारिए'' भजन प्रस्तुत किया।

इस अवसर पर विज्ञान नगर के बड़ी संख्या में साधक–साधिकाएं उपस्थित रहे। कार्यक्रम के अंत में महिला योग शिक्षिका पूनम चड्ढा ने आगंतुक अतिथियों का आभार व्यक्त किया।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**